सात्विक जीवनचर्या और दीर्घायुष्य

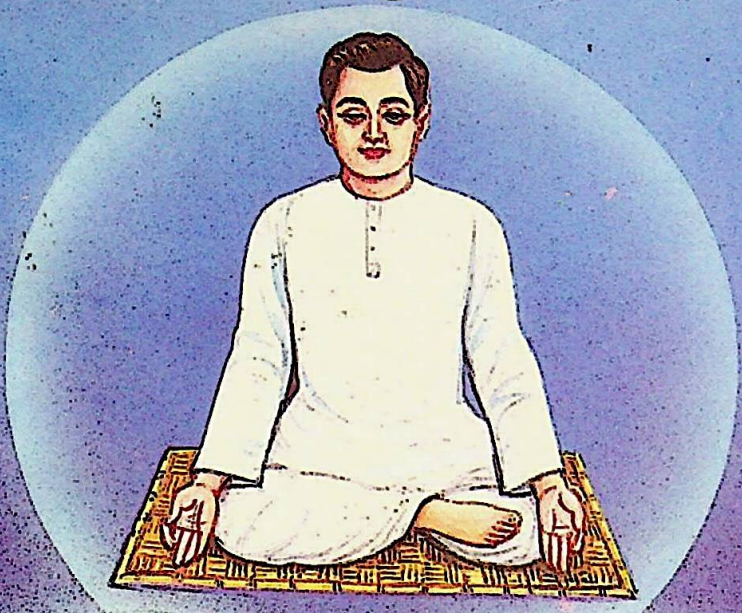

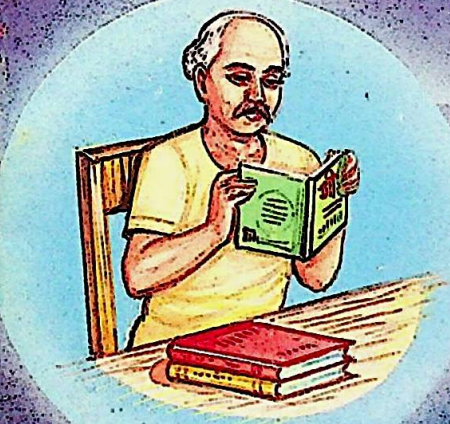

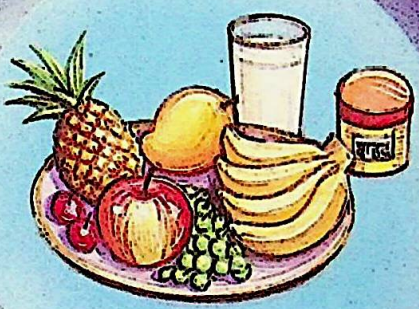

2.3

सात्विक जीवनचर्या और दीर्घायुष्य

लेखक
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक
युग निर्माण योजना
गायत्री तपोभूमि, मथुरा

आवृत्ति– २००३

मूल्य : ४.५० रुपए

आहार–विहार से स्थूल शरीर का, संतुलन और सत्–चिंतन से सूक्ष्म शरीर का तथा सौजन्य–सद्भाव से कारण शरीर का स्वास्थय–संरक्षण होता है। नैतिक एवं उदार जीवन–क्रम अंतरात्मा को सबल रखता है और शारीरिक आरोग्य अंत:करण की उत्कृष्टता का सहज सुलभ प्रतिफल मात्र है।

आरोग्य और दीर्घ जीवन इस तरह प्राप्त करें

स्वास्थ्य रक्षा के नियमों में सभी सरल और स्वाभाविक हैं। उनमें न कोई कठोर है और न कष्ट साध्य। कठिन तो दुष्कर्म होते हैं। चोरी, उठाईगीरी, छल आदि दुष्कर्म करने के लिए असाधारण चतुरता और कुशलता की आवश्यकता पड़ती है, किंतु सच्चाई, ईमानदारी की राह पर चलना किसी अल्प बुद्धि वाले के लिए भी सरल है। इसी प्रकार प्रकृति प्रेरणा के अनुरूप जीवन–यापन पशु–पक्षी भी कर लेते हैं और आजीवन निरोग बने रहते हैं। सृष्टि के सभी जीवधारी जन्मते, बढ़ते, वृद्ध होते और मरते हैं, पर बीमार कोई नहीं पड़ता। अन्य पशु–पक्षियों में कदाचित ही कभी कोई रोगी देखा गया हो। संसार में एक ही मूर्ख प्राणी है, जो आए दिन बीमार पड़ता है, वह है–मनुष्य। उसके चंगुल में फँसे हुए पालतू पशु भी बीमार होते पाए जाते हैं। मनुष्य ही है जो स्वयं बीमार पड़ता है और अपने संपर्क अधिकार के अन्य प्राणियों को बीमार करता है। यह अभिशाप असंयम का–प्रकृति प्रेरणा के विपरीत आचरण करने का है। यदि कुचाल चलने की मूर्खता को छोड़ दिया जाए, तो सृष्टि के अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य के लिए सभी सक्षम और निरोग जीवन यापन नितांत सरल एवं संभव हो सकता है।

प्रकृति प्रेरणा का अनुगमन करके सभी जीवधारियों ने अपने शरीरों को निरोग बनाए रहने का वरदान पाया है। मनुष्य के लिए भी एकमात्र रास्ता यही है। प्रकृति के नियमों को झुठलाया नहीं जा सकता। उनके उल्लंघन की क्षमता मनुष्य में नहीं है। यहाँ बरती गई चतुरता में लाभ नहीं हानि ही हानि है। प्रकृति से लड़कर नहीं, हम उसका अनुगमन करके ही चैन से रह सकते हैं। यह तथ्य यदि हृदयंगम किया जा सके, तो मनुष्य जाति के सामने खड़ी स्वास्थ्य संकट की विषम विभीषिका से सहज ही छुटकारा पाया जा सकता है। यदि सही राह पर चलने का साहस जुटाया जा सके, विकृत

जीवन क्रम अपनाए रहने का दुराग्रह छोड़ा जा सके तो आरोग्य रक्षा, निरोगता एवं दीर्घ जीवन की समस्या का सहज ही समाधान हो सकता है। कुछ थोड़े से निमय अनुशासन ही ऐसे हैं, जिन्हें यदि दृढ़ता पूर्वक अपनाया और स्वभाव का अंग बनाया जा सके तो न केवल बिगड़े हुए स्वास्थ्य को ही सुधारा जा सकता है, वरन् संयम साधना के फलस्वरूप मिलने वाली बलिष्ठता एवं दीर्घ जीवन का वरदान भी पाया जा सकता है। इस प्रकार के नियमों में सात प्रमुख माने गए हैं। इन्हें आरोग्य सूर्य की सप्त वर्ण, सप्त किरणें भी कहा जा सकता है।

१–कड़ी भूख लगने पर ही खाया जाए। जब तक पेट की तीव्र मांग न हो तब तक मुँह में कुछ भी न डाला जाए। जब खाना हो तब आधा पेट आहार से भरा जाए। चौथाई पानी के लिए और चौथाई हवा के लिए खाली रखा जाए। ठूँस–ठूँस कर इतना न खाया जाए कि आलस्य आने लगे और काम करना कठिन हो जाए। मुख के ग्रास को इतना चबाया जाए कि वह पतला होकर सहज ही गले से नीचे उतर जाए। दिन में दो बार खाना पर्याप्त है। बीच–बीच में बकरी की तरह कुछ–कुछ खाते रहने का स्वभाव न बनाया जाए। प्रातः जलपान में भारी चीजें न ली जाएँ। दूध, छाछ, फलों का रस, शाक का सूप जैसे पतले पदार्थ ही जलपान के लिए पर्याप्त समझे जाएँ। तीसरे प्रहर आवश्यकता पड़े तो ऐसे ही तरल पदार्थ लिए जा सकते हैं।

२–खाद्य पदार्थों को न्यूनतम अग्नि संस्कारित किया जाए। तेल, घी में तलने–भूनने की रीति अपनाकर उनका जीवन तत्व समाप्त न किया जाए। सब्जियों को उबाल लेना पर्याप्त है। जहाँ तक हो सके अन्न, फल, शाक छिलके समेत ही लिए जाएँ। छिलके वाले भाग में आहार का अधिक महत्वपूर्ण तत्व रहता है। दालें साबुत ही पकाई जाएं। तेज आग पर पकाने से खाद्य पदार्थों के जीवन तत्व जल जाते हैं, इसलिए उन्हें मंदी आग पर पकाया जाए। अच्छा तो

भाप से पकाना है। इसके लिए स्टीम कुकर का उपयोग किया जा सके तो उत्तम है। मौसमी फल, कच्चे शाकों का सलाद, कच्चे अन्न, अंकुरित धान्य, दूध, दही जैसे सात्विक पौष्टिक पदार्थ ही उपयोग में लाए जाएँ। मिष्ठान्न, पकवान, गरिष्ठ, अधिक चिकनाई एवं मसाले पड़े भोजन से बचा जाए। आचार, चटनी जैसे उत्तेजक पदार्थों से बचा जाए। थाली में अधिक संख्या में वस्तुएँ न रहें। उनकी संख्या जितनी कम रहे उतनी ही पाचन में सुविधा रहेगी।

३–शारीरिक श्रम इतना किया जाए जिससे थक कर गहरी निद्रा का आनंद लिया जा सके। शरीर से कम और मस्तिष्क से अधिक काम लेने वाले अक्सर बीमार पड़ते हैं। पशु–पक्षी सारे दिन आहार की तलाश में दिन भर भागते–दौड़ते, उड़ते–उछलते रहते हैं, इसलिए उनके शरीर निरोग एवं बलिष्ठ बने रहते हैं। हमारी दिनचर्या में भी शारीरिक श्रम के लिए समुचित स्थान होना चाहिए। व्यायाम में स्वास्थ्य संवर्धन साधना का मनोयोग जुड़ा रहता है इसलिए उससे दुहरा लाभ है। शरीर की स्थिति के अनुरूप हलके–भारी थोड़े बहुत व्यायाम का क्रम भी दिनचर्या में जोड़कर रखा जाए। घर के काम–काज में हाथ बँटाना, टूट–फूट की मरम्मत, सफाई, घरेलू शाक–वाटिका, गृह–उद्योग, चक्की पीसना जैसे कामों में परिवार के सभी लोग भाग लेते रहें तो शारीरिक श्रम के अतिरिक्त सुव्यवस्था, आर्थिक लाभ भी मिलेगा और सुरुचि सुसज्जा का वातावरण दृष्टिगोचर होगा। रुग्ण–दुर्बल व्यक्ति भी चारपाई पर पड़े–पड़े अंग संचालन व्यायाम करते रह सकते हैं। मालिश से भी इस प्रयोजन की पूर्ति होती है। श्रम शारीरिक स्थिति के अनुरूप हो। लोभ या दबाव से वह इतना अधिक न हो जाए कि अत्यधिक शक्ति नष्ट होने से थकान चढ़ी रहे और जीवन संकट उत्पन्न होने लगे। श्रम और विश्राम का संतुलन मिलाकर चला जाए तब ही बात बनती है।

४–स्वच्छता से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की व्यवस्था

बनी रहती है। घर, आँगन, कपड़े, विस्तर, बर्तन, खाद्य पदार्थ, पानी आदि में गंदगी न रहने पाए इसके लिए सतत सतर्कता बरतने और उन्हें स्वच्छ रखने के उपाय बरतने की आवश्यकता होती है। खुली धूप और हवा का घरों में प्रवेश रहना चाहिए। सीलन, घुटन के वातावरण में रहने से रुग्णता आ घेरती है। वृक्ष, पौधे, बेलें, फूल, तुलसी आदि की हरियाली घर, आँगन में रहे तो उससे सुंदरता सुसज्जा के अतिरिक्त स्वच्छ वायु का लाभ भी मिलता है। टट्टी, पेशाबघर, स्नानघर, नाली, कूड़ेदान, बरतन माँजने का स्थान, रसोईघर आदि की सफाई पर विशेष रूप से ध्यान रखा जाए। प्रायः इन्हीं स्थानों पर गंदगी जमती और रुग्णता पलती है। मक्खी, मच्छर, खटमल, पिस्सू, मकड़ी, जुएँ आदि बढ़ने पलने न पाएँ, इसकी सतर्कता बरती जाए। फिनायल, चूना, साबुन, डिटॉल आदि का समय–समय पर उपयोग करते रहा जाए। बुहारी और झाड़न जल्दी और बार–बार काम में लाए जाएँ। गरम पानी और धूप का उपयोग सफाई में सहायक सिद्ध होता है। स्नान तौलिए से रगड़ कर इस प्रकार किया जाए कि किसी भी अवयव पर मैल की परत जमा न रहने पाए। दाँत, मुख एवं अन्य छिद्रों की सफाई पर विशेष ध्यान रखा जाए।

५–नियमितता का सदा ध्यान रखा जाए। यथा संभव दिनचर्या नियत निर्धारित रखी जाए। जिसकी नौकरी में ड्यूटी बदलती रहती है या दिन–रात भाग–दौड़ करनी पड़ती है, उन्हें भी स्थिति के अनुरूप अपनी दैनिक समय व्यवस्था बनाते और बदलते रहना चाहिए। जिनकी कार्य–पद्धति नियम निर्धारित है, उन्हें तो समय का विभाजन करके और दृढ़तापूर्वक पालन करने की बात ध्यान में रखनी ही चाहिए। जल्दी सोना और जल्दी उठना बहुत अच्छी आदत है। प्रातःकाल का समय जिन कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है, उनमें अधिक सफलता मिलती है। सबेरे जल्दी उठना उन्हीं के लिए संभव है, जो रात को जल्दी सोते हैं, अन्यथा निद्रा पूरी न हो सकेगी।

इंद्रियों से सीमित काम लिया जाए। रात्रि को तेज प्रकाश में आँखों पर दबाव डालने वाले काम न किए जाएँ। ब्रह्मचर्य का अधिक पालन किया जाए। समय विभाजन में नित्यकर्म, आजीविका, विश्राम, मनोरंजन, परिवार व्यवस्था, स्वाध्याय, उपासना, लोकसेवा के सभी पक्षों का समावेश रखा जाए। उपार्जन में ही पूरा समय न खपा दिया जाए।

६–चित्त को हर घड़ी प्रसन्न रखा जाए। जिंदगी को खेल की तरह जिया जाए। हर काम उत्साह और मनोयोग के साथ किया जाए, पर सफलता असफलता से अत्यधिक उद्विग्न न बना जाए। तैयारी बड़ी से बड़ी करें, किंतु असफलता हाथ लगने पर संतुलन बनाए रखने की मनःस्थिति भी रखे रहें। मन पर छाए रहने वाले निराशा, भय, आशंका, भीरुता, आत्महीनता, संकोच जैसे अवसाद और क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, प्रतिशोध, चिंता, उद्विग्नता, कामुकता जैसे आवेश केवल हानि ही हानि करते हैं। ज्वार–भाटों की तरह मन को उछलने, गिरने न देना चाहिए। इसमें बहुमूल्य मनःशक्ति का दुरुपयोग होता है और प्रगति के लिए रचनात्मक चिंतन करने की क्षमता भी नष्ट हो जाती है। मनोविकारों से उत्तेजित मस्तिष्क से अगणित शारीरिक और मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं। वासना, तृष्णा, और अहंता की मात्रा जितनी बड़ी–चढ़ी होगी मस्तिष्क में उतनी आग जलेगी और उतनी ही अशाँति रहेगी। जो है उससे प्रसन्न, अधिक पाने के लिए उत्साह पूर्वक प्रयत्न किया जाए, किंतु अभीष्ट लाभ न मिलने पर खिन्न होने की आदत न डाली जाए। सादगी, सच्चाई, ईमानदारी, सज्जनता, सहृदयता, प्रसन्नता भरा स्वभाव बना लेना और मानसिक संतुलन बनाए रखना बहुत बड़ा गुण है, जिसके आधार पर जीवन को सफलतापूर्वक जिया जा सकता है और आनंदित रहा जा सकता है। ऐसी स्थिति रहने पर शारीरिक और मानसिक दोनों ही स्वास्थ्य की दृष्टि से अक्षुण्ण बना रहता है। महत्वाकाँक्षा, जिम्मेदारी एवं आवश्यकताएँ उतनी ही बढ़ाई जाएँ, जितनी वर्तमान स्थिति के अनुरूप हों। अधिक बच्चे पैदा करने और

इतनी अधिक लंबी चौड़ी योजना बनाना जिसका ताल–मेल वर्तमान स्थिति के साथ न बैठता हो, जीवन क्रम में न कर घोलने एवं स्वास्थ्य को नष्ट करने का मार्ग ही कहा जा सकता है। हलकी–फुल्की, हँसती–हँसाती, प्रसन्न, संतुष्ट, उत्साहित, आनंदित और आशान्वित जिंदगी जीने की रीति–नीति अपनाई जाए तो गरीबी और कठिनाइयों के रहते हुए भी आनंद, उल्लास भरा निरोग जीवन जिया जा सकता है।

७–स्वास्थ्य संरक्षण के लिए नैतिक और सामाजिक मर्यादाओं का पालन आवश्यक है। दुष्टता, अनीति और उच्छृंखलता अपनाने वाले व्यक्ति भरपूर सुख–सुविधाओं के रहते हुए भी आत्म–प्रताड़ना सहते रहते हैं और शोक संताप भरा जीवन जीते हैं। आहार–विहार से स्थूल शरीर का–संतुलन और सत् चिंतन से सूक्ष्म शरीर का एवं सौजन्य सद्भाव से कारण शरीर का स्वास्थ्य संरक्षण होता है। मात्र हाड़–माँस का शरीर ही संपूर्ण आरोग्य का केंद्र नहीं है। जीवात्मा के तीनों ही शरीर समग्र स्वास्थ्य की संरचना करते हैं। अस्तु नैतिक एवं उदार जीवन–क्रम अंतरात्मा को सबल रखता है और उसके आधार पर मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा होती है। चरित्र और समाज निष्ठ रहने वाले सदाचारी एवं उदार लोक सेवी प्रकृति के मनुष्य ही सम्मान पाते हैं, प्रसन्न, संतुष्ट और प्रफुल्लित रहते हैं, लोक–परलोक सुधारते हैं और जीवन लक्ष्य पूरा करने में सफल होते हैं। शारीरिक आरोग्य तो अंतःकरण की उत्कृष्टता का सामान्य सा सहज प्रतिफल मात्र है।

लंबी उम्र के तीन साधन

आरोग्य मनुष्य की साधारण समस्या है। थोड़े से नियमों का पालन, साधारण सी देख–रेख से वह पूरा हो जाता है, किंतु उतना ही जब मनुष्य भार समझकर पूरा नहीं करता तो उसे कड़ुवा प्रतिफल भुगतना पड़ता है। थोड़ी–सी सावधानी से बीमारी तथा दुर्बलता को निमंत्रण दे बैठता है। रहन–सहन में यदि पर्याप्त संयम

रखा जाए तो कुछ थोड़े से नियम हैं, जिनका पालन करने से मनुष्य लंबी आयु, स्वास्थ्य का सुखोपभोग प्राप्त कर सकता है। उनमें से तीन प्रमुख हैं। १–प्रातः जागरण, २–ऊषा पान, ३–वायु सेवन। ये तीनों ही नियम सर्वसुलभ और रुचिकर हैं, इनमें किसी तरह की कोई कठिनाई नहीं, जिनका पालन न हो सके, या जिसके लिए विशेष साधन जुटाने की आवश्यकता पड़े।

प्रातः जागरण को संसार के सभी लोगों ने स्वास्थ्य के लिए अतिशय हितकर माना है। अंग्रेजी कहावत है–"जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को स्वस्थ, धनवान और बुद्धिमान बनाता है।' शास्त्रकार का कथन है–

"ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत्स्वस्थेऽरक्षार्थ मायुषः।"

प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में जाग उठने से तंदरुस्ती और उम्र बढ़ती है।

वेद का प्रवचन है–

यदद्य सूर उदितोऽनागा मित्रो अर्यमा। सुधाति सविता भगः। साम १३।५१

अर्थात प्रातःकालीन प्राण वायु सूर्योदय के पूर्व लेने तक निर्दोष रहती है, अतः प्रातःकाल जल्दी उठना चाहिए, इससे स्वास्थ्य और आरोग्य स्थिर रहता है तथा धन की प्राप्ति होती है।

संत बिनोवा का कहना है–"रात में नींद लेने के बाद शरीर की वृद्धि हो जाती है। उसे कायम रखने के लिए सुबह जल्दी उठ जाना चाहिए। उस समय दिमाग ताजा रहता है, कोई आवाज नहीं होती, सृष्टि की अनुकूलता होती है, इसलिए उस वक्त बुद्धि ज्ञान–ग्रहण के लिए जाग्रत रहती है।'

स्वामी विवेकानंद का कथन है–"सूर्योदय से पूर्व उठने से शरीर स्वस्थ रहता है तथा बुद्धि का विकास होता है।'

सिक्खों के धर्म ग्रंथों में आया है–यदि आप चाहते हैं कि आपकी आयु अधिक हो, बुढ़ापा आप से दूर रहे, आपका शरीर पूर्ण

स्वस्थ बना रहे, तो आप प्रातः काल जल्दी उठा कीजिए। आरोग्य रक्षा के नियमों में प्रातःकाल जागने में विश्व एकमत है। यह जानी हुई बात है कि दिन भर के कार्यों, दौड़ धूप आदि से जो धरती में हलचल उत्पन्न होती है, उससे प्राकृतिक वातावरण अशाँत हो जाता है। धूल के कण, कार्बन तत्व और अन्य विषैले पदार्थ हवा के साथ आकाश में भर जाते हैं, इनका स्वास्थ्य पर दूषित प्रभाव पड़ता है। उस वायु में स्थूल तत्व अधिक होते हैं और प्राण की मात्र कम होती है। जिससे मनुष्यों के शरीर में भी स्थूलता तो बढ़ती है और प्राण संचय भी अवरुद्ध होता है। दिन भर का कोलाहल रात में शांत होने लगता है और तीसरे प्रहर अर्थात प्रातःकाल तक वह सारा ही गर्द गुबार जमीन में बैठ जाता, जिससे प्राण वायु निर्दोष हो जाती है। इस वातावरण में स्वाभाविक सांसे लेने पर प्राण की इतनी मात्रा शरीर में एकत्रित हो जाती है कि जिससे सारे दिन तबियत प्रसन्न रहती है और ताजगी बनी रहती है। इससे प्राण का संचित कोष रीतता नहीं है और आरोग्य स्थिर बना रहता है। इस प्राण में इतनी जीवट होती है जो दिन भर के विषैले पदार्थों से लड़कर उसे समाप्त कर देने में सफल हो जाती है और शरीर पर कोई दूषित आघात पड़ने नहीं पाता। इस प्राण–विद्युत के संचय के लिए प्रातःकाल जल्दी जाग उठना सब प्रकार मंगलकारी होता है।

इन लाभों को जानते हुए भी लोगों को शिकायत रहती है कि प्रातःकाल उनकी नींद नहीं टूटती, यदि प्रयत्न करें और जागकर बैठ जाएँ तो आलस्य दूर नहीं होता। शरीर को जितने विश्राम की आवश्यकता होती है, वह पूरी न हो तो आलस्य आना, जम्हाइयाँ आना स्वाभाविक है यह शिकायत उन्हीं को हो सकती है, जिनकी नींद पूरी न होती हो। ऐसा तभी संभव है जब वह देर से सोता हो। इसलिए प्रातःकाल जल्दी उठने के लिए यह आवश्यक है कि शाम को यथा संभव जल्दी ही आवश्यक कार्यों से निपट कर सो जाए जाए। सोकर जाग जाने का अर्थ केवल चारपाई पर बैठ जाना नहीं

होता, वरन् उस समय का उपयोग भी होना चाहिए।

सूर्योदय से पूर्व शैया त्यागते ही बिना शौचादि गए शाम के रखे हुए जल का पान करना ऊषा पान कहलाता है। जल की मात्रा एक पाव से लेकर तीन पाव तक हो सकती है, जिस बर्तन में जल रखा हो, वह ताँबे का हो तो अधिक अच्छा है, यदि वह संभव न हो, किसी भी स्वच्छ बर्तन में ढक कर रखा जा सकता है।

वैद्यक ग्रंथों में ऊषा पान को अमृत पान कहा गया है, स्वास्थ्य के लिए उसकी बड़ी प्रशंसा की गई है और यह बताया गया है कि जो प्रातःकाल नियमित रूप से जल पीते हैं उनकी बबासीर, ज्वर, पेट के रोग, संग्रहणी, मूत्र रोग, कोष्ठबद्धता, रक्त पित्त विकार, नासिका आदि से रक्त–स्राव, कान सिर तथा कमर के दर्द, नेत्रों की जलन आदि व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। वैद्यक ग्रंथों में लिखा है–

सवितुरुदयकाले प्रसृति सालिकस्य पिवेदष्टी।
रोग जरा परियुक्तो, जीवेद्वत्सर शतं सामग्रा॥

अर्थात–सूर्योदय से पूर्व आठ अंजलि जल पीने से मनुष्य कभी बीमार नहीं पड़ता, बुढ़ापा नहीं आता और सौ वर्ष से पूर्व मृत्यु नहीं होती।

प्रातःकाल जल पीने से आंतों में लगा हुआ मल साफ होता है और उनमें पुष्टता आती है। गुर्दे शक्तिशाली बनते हैं। आँख की ज्योति बढ़ती है, बाल सफेद नहीं होते, बुद्धि तथा शरीर निर्मल रहता है, जिससे वह सब प्रकार से रोगों से बचा रहता है। प्रातःकाल जल पीना आरोग्य रक्षा की दूसरी महत्वपूर्ण कुंजी है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रातः जागरण का वास्तविक लाभ वायु सेवन से है। यदि कोई प्रातःकाल उठकर कुछ दूर शुद्ध वायु में घूमने जाया करे तो निश्चय ही उसकी आयु लंबी होती। जिस स्थान पर मनुष्य तथा अन्य प्राणी बहुतायत में निवास करते हैं, उनके द्वारा निरंतर साँस छोड़ने तथा चीजों को मैला करते रहने से उस स्थान का वातावरण शुद्ध नहीं रहता। वायु दोष आ जाने से वह लोगों के

स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती है। किंतु आबादी के बाहर के स्थान वृक्षों द्वारा निरंतर शुद्ध किए जाते रहते हैं। इसलिए गाँव या नगर से बाहर के शाँतमय वातावरण में कुछ देर रहकर आरोग्य लाभ का अवसर प्राप्त किया जा सकता है। भ्रमण से जहाँ व्यायाम की आवश्यकता पूरी होती है। वहाँ बाहर की शुद्ध वायु का लाभ मिलता है। भ्रमण ऐसे ही शुद्ध बगीचों वाले स्थानों की ओर करना चाहिए। खुले आसमान की ओस–भरी दूब में नंगे पाँव घूमने से शरीर को अपार शक्ति मिलती है।

स्वास्थ्य व आरोग्य रक्षा के लिए ये तीन अचूक नियम हैं। स्वास्थ्य जैसी साधारण समस्या के लिए किसी कठोर व्रत की आवश्यकता नहीं है। कोई व्यक्ति इन नियमों का पालन करते हुए आरोग्य लाभ प्राप्त कर सकता है। ये तीन प्रहरी ऐसे हैं, जो सब तरफ से हमारे स्वास्थ्य की रक्षा और शरीर को पोषण प्रदान करते हैं, इन्हें सजग रखें तो कोई रोग तथा शारीरिक व्याधि हमें कष्ट व पीड़ा न दे सकेगी।

दीर्घ जीवन के स्वर्ण सूत्र

जब हम कुछ व्यक्तियों को दीर्घजीवी रहते हुए सुनते हैं तो यह विचार सहज ही उत्पन्न होता है कि क्या हम उतनी लंबी आयु प्राप्त नहीं कर सकते? हम जानते हैं कि दीर्घजीवन के लिए किन–किन उपायों का पालन करना चाहिए फिर भी हम उन उपायों की उपेक्षा करते हैं, दीर्घ जीवन के नियमों का पालन नहीं करते। हमारे पूर्वजों का तो यहाँ तक विश्वास था कि हम जब तक चाहें तब तक जीवित रह सकते हैं। इसके लिए भीष्म पितामह का उदाहरण प्रत्यक्ष है, जिन्हें इच्छा मृत्यु की सिद्धि प्राप्त थी।

दीर्घ जीवन के लिए हमारे मन में यह विश्वास होना आवश्यक है कि हम कम आयु में मृत्यु को प्राप्त नहीं होंगे। यदि आप यह आस्था बना लें कि हम सौ वर्ष से कम आयु में मृत्यु को प्राप्त नहीं होंगे तो विश्वास मानिए कि आपकी आयु सौ वर्ष तक अवश्य पहुँचेगी। आपका

यह विश्वास जितना ही दृढ़ होता जाएगा, उतनी ही आयु बढ़ती जाएगी, परंतु यदि आप यही मान बैठें कि कल का भी पता नहीं, शायद मृत्यु कल ही आ घेरे तो आपका ऐसा विश्वास आपको जीवितावस्था में ही मृत्यु के गड्ढे में धकेल देगा। दूसरे शब्दों में आप जीते जी ही मृतक के समान हो जाएँगे। आपका आंतरिक संशय ही आपको मृत्यु के मुख तक पहुँचाने में सहायक होगा।

दूसरा विश्वास शरीर के निरोग होने का है। जो लोग यह मानते हैं कि हमें कोई रोग नहीं है, उनके रोग ग्रस्त होने पर भी रोग के कीटाणु शीघ्र नष्ट हो जाते हैं, परंतु इसके विपरीत जो लोग निरोग होते हुए भी अपने रोग–ग्रस्त होने की शंका से त्रस्त रहते हैं, वे धीरे–धीरे रोगी हो जाते हैं। उनका वहम ही उन्हें रोगी बना देता है। जो लोग क्षय–ग्रस्त नहीं हैं, उन्हें आधुनिक चिकित्सक टी० वी० का रोग बता दें तो उन्हें टी० वी० हो ही जाती है। ऐसा कई रोगियों के संबंध में हो चुका है। कहते हैं कि वहम की दवा तो लुकमान के पास भी नहीं थी।

जहाँ आशंका नहीं वहाँ रोग का क्या काम? जहाँ विश्वास नहीं वहाँ जीवन कैसा? साधारण सा रोग होने पर आप उसके बढ़ने की शंका मत कीजिए, परंतु रोग शामक उपाय अवश्य करते रहिए। इससे आपका रोग निर्मूल हुए बिना न रहेगा।

दीर्घ जीवी होने के लिए खान–पान को भी नियमित रखना चाहिए। यह माना कि संसार में सभी वस्तुएँ उपभोग के योग्य हैं, परंतु किसी की भी अति हानिप्रद है। अधिक भोजन से बदहजमी होना संभव ही है। अधिक मीठा भी हानिप्रद है, बार–बार खाने की प्रवृत्ति भी मनुष्य को रोगी बनाती है। इसलिए आचार्यों ने भोजन के समय निश्चित किए हैं। इसके अनुसार अधिक से अधिक प्रतिदिन तीन बार भोजन करना चाहिए।

शौच, स्नान, निद्रा, आहार–बिहार सभी की सीमाएँ बाँधकर हमारे जीवन को सुव्यवस्थित कर दिया गया है, फिर भी हम नियमों

का उल्लंघन करें तो इसमें हमारा अपना ही दोष समझा जाएगा।

हमारे ऋषियों ने योगासनों द्वारा दीर्घजीवी होने के उपाय ढूँढ निकाले थे और आज भी आसन पद्धति से स्वास्थ्य लाभ किया जाता है। जो लोग आसन पद्धति को नहीं अपना सकते, उनके लिए विभिन्न व्यायामों की सृष्टि की गई है। प्राचीन भारतीय पद्धति के अनुसार दंड, कसरत का ऐसे ही व्यायामों में समावेश है, परंतु आधुनिक प्रणाली के अनुसार विभिन्न खेलों को, भागदौड़, तैरना, कूदना आदि के रूप में व्यायामों को प्रश्रय दिया गया। यह सभी हमारे स्वस्थ रहने में सहायक सिद्ध होते हैं।

आज के युग में व्यायाम का एक सरल रूप टहलना है। अधिकाँश शहरी व्यक्ति टहलने जाते और स्वस्थ रहते हैं। इससे मन भी प्रफुल्लित रहता है और ताजा वायु भी प्राप्त हो सकती है। प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ही भ्रमण कर लौट आया जाए, तो मनुष्य को बहुत कुछ लाभ हो सकता है। जो लोग रोगी हैं, वे भी प्रातः भ्रमण द्वारा अपने शरीर को स्वस्थ बना सकते हैं।

पानी का भी हमारे शारीरिक स्वास्थ्य पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। हल्का पानी शरीर को भारी नहीं होने देता, इसके विपरीत भारी पानी, मीठा होते हुए भी शरीर में भारीपन ला देता है और उसमें मन की प्रसन्नता नष्ट हो जाती है। यदि अच्छा और हल्का कूप–जल पीने की आदत डाली जाए तो शरीर में रोग भी प्रायः उत्पन्न न हों। यह ध्यान रहे कि जल में कृमि न पड़ें, इसके लिए दो–तीन महीने में एक बार कोई कीटाणुनाशक दवा कुएँ में डाल देनी चाहिए।

इस प्रकार कुछ सावधान रहने, नियम पालन करने और मन को प्रसन्न रखने से दीर्घजीवन प्राप्त किया जाना संभव है।

हमारे स्वास्थ्य के निर्देशक हम स्वयं हैं। वह इस बात पर निर्भर करता है कि हम कहाँ तक प्रकृति के साथ सहयोग करते हैं और कहाँ तक उसके मार्ग में बाधा डालते हैं। विश्व के काम के इस अंश को ईश्वर ने प्रकृति के सुपुर्द कर दिया है और वह उसके

काम में दखल नहीं देना चाहता। एक समय था, जब मनुष्य रोग के स्वरूप, उसके कारण और उपचार के बारे में एकदम अनजान था। वह समझता था कि रोग देव–देवियों द्वारा, मनुष्यों से किए गए पापों और अपराधों का दंड है, पर आज समय बदल गया है। आज शीतला देवी, (चेचक) पूजा से नहीं, इलाज से शाँत हो जाती हैं। हैजा, प्लेग, इन्फ्लूएंजा तथा इसी प्रकार की अन्य भयानक एवं संक्रामक बीमारियाँ संसार में कई उन्नत देशों में समाप्त हो चुकी हैं। अतः स्वास्थ्य के कुछ ऐसे सरल नियम हैं, जिनका पालन करने से मनुष्य की औसतन आयु १०० या इससे अधिक वर्ष तक हो सकती है। खास–खास नियम ये हैं–

१–जीवन को निरंतर पोषक तत्व मिलने चाहिए। हमारा भोजन पुष्टिकारक व शुद्ध हो। केवल स्वाद के लिए मिर्च–मसाले, तली हुई चीजें, चाय, काफी, तंबाकू और विशेषतया शराब से बचना चाहिए। सादी रोटी, शाक–सब्जी, दाल, दूध वे पदार्थ हैं, जिनकी आवश्यकता मनुष्य को शरीर–स्वास्थ्य के लिए हैं। हमें इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि हम उतना ही खाएँ, जितना हम आसानी से हजम कर सकते हैं।

२–दूसरी चीज आवश्यक है नियमित व्यायाम। शहर से बाहर विशेषतया खुली हवा में प्रतिदिन २–३ मील टहलना चाहिए। यह संभव न हो तो घर के भीतर व्यायाम किया जाए। व्यायाम न तो बहुत हल्का ही हो और न बहुत भारी। कमजोर व्यक्तियों और दिल की धड़कन के रोगियों के लिए टहलने का व्यायाम लाभदायक है।

३–खाने–पीने, सोने और काम करने की हमारी आदतें नियमित होनी चाहिए। अधिक बोलने से भी बचना चाहिए। हँसी मजाक व आमोद–प्रमोद जीवन के लिए उपयोगी हैं, पर परिमित मात्रा में ही। हमें सदा सक्रिय रहना चाहिए। सुस्ती और काहिली का शिकार नहीं होना चाहिए। किसी अच्छे काम में जुटे रहना चाहिए। इसमें शरीर श्रम भी शामिल हों। बिना कुछ न कुछ शरीर श्रम किए हुए हमें भोजन

भी न करना चाहिए।

४–बीमारी की हालत में आराम करना चाहिए तथा चिंताओं और बहुत अधिक सोच–विचार से बचना चाहिए। हमें केवल रोगनाशक ही नहीं बल्कि कुछ ऐसी औषधियों का सेवन करना चाहिए जो शमन करने वाली हों और केवल प्रकृति के स्वाभाविक कार्य में सहायता करती हों। इस दृष्टि से प्राकृतिक या होम्योपैथी चिकित्सा लाभप्रद हो सकती है।

५–सबसे अधिक महत्वपूर्ण और जरूरी बात मन को सब परिस्थितियों में स्थिर और शाँत रखना है। ऐसे कार्यों और साधनों की खोज करते रहिए जिनसे मन शाँत और प्रसन्न रह सके। प्रसन्नता और शाँति का वातावरण दीर्घायु का परम साधन है।

सात अनुभूत महामंत्र

सैंतीस वर्ष की आयु का एक तरुण रोगी शैया पर पड़े–पड़े एक टक निराश और बेबसी में अस्पताल की छत की ओर देख रहा था। पंद्रह दिन से वह अस्पताल के इसी कमरे में डाक्टर और नर्सों की देख–रेख में दवाइयाँ और इंजेक्शन ले रहा था।

पर अभी हालत में कोई सुधार नजर नहीं आ रहा था। वह इस दशा में था, जिसमें जीवित अवस्था में ही क्षण–क्षण मृत्यु के दर्शन होते रहते हैं। उनके मित्र, हितैषी और संबंधी उसकी मिजाजपुर्सी के लिए अस्पताल के उस कमरे में आते हैं। पूछते हैं–"आपकी तबियत कैसी है?"

उत्तर में वह मायूसी से आँखें डबडबाए रहता है।

आह! यह मनुष्य का जीवित रहना भी कितना मधुर है? इसमें कितने प्रियजन हैं। मनुष्य, ममता और मोह की कोमल रज्जु से बँधा है। जब मौत मँडराने लगती है तो ये कमनीय स्नेह सूत्र, सारे मित्र प्रियजन और समस्त परिजन बिछुड़ते दीखते हैं तो हृदय के सैकड़ों टुकड़े ही हो जाते हैं। तभी वह समझ पाता है कि जिंदगी कितनी बहुमूल्य है।

एक बार स्वास्थ्य गिरने पर फिर विश्व की संपदा भी उसे वापस नहीं दिला सकती। आदमी के शरीर का हर अवयव बहुमूल्य है, जो जीवन में एक बार, एक ही बार मिला है। खराब होने पर बदला नहीं जा सकता। अनंत व्यय करने और उपचार की हद करने पर भी कार्नेरी को कोई लाभ नहीं हुआ था।

कार्नेरी बीमार चलता रहा। डाक्टर इलाज करते–करते थक गए। सब तरह दवाइयाँ देकर हार गए। सारे परिवार वाले निराश हो गए। परिचितों ने उस दुनिया से कूच करने की तैयारी में पड़े कार्नेरी के पास आना जाना बंद कर दिया। जाए भी तो कोई कब तक? किसी के पास आते ही आँखों में आँसू और मौत की कटु चर्चा कौन दुखी होने के लिए बार–बार मरीज के पास आता जाता।

हाय! मृत्यु के घोर अंधकार से घिरा हुआ कार्नेरी केवल सैंतीस वर्ष की तरुण आयु में रोग, व्याधि और कमजोरी से असहाय निरुपाय होकर संसार से विदा होने की तैयारी करने लगा।

यकायक कार्नेरी के मन में एक विचार आया–यदि मरना ही निश्चित है, देर–सबेर दुनिया से कूच ही करना है, तो उसके लिए व्यर्थ ही फिक्र करने से क्या लाभ? चिंता फिजूल ही मुझे परेशान कर रही है। जितने दिन, जितने क्षण जीना है, उतनी देर तो निश्चित जी लेना चाहिए।

अपनी मृत्यु निश्चित समझ कर कार्नेरी ने जीवन की आशा में तड़पना छोड़ दिया।

वह धीरे–धीरे अपने मन को, जितना जीवन बचा है, उसी को ठीक तरह व्यतीत करना चाहिए, विचार पर एकाग्र करने लगा। उसने अपना मन शाँत कर लिया और धीरे–धीरे ईश्वर का ध्यान करने लगा।

ज्यों–ज्यों उसका चित्त शाँत होता जाता था, त्यों–त्यों जिंदगी की अच्छी बातों की ओर ध्यान लगता जाता था। उसके विचार उज्ज्वल होते गए। चिंता दूर हुई, तो वह अपने मन ही मन एक प्रकार

के आराम का अनुभव करने लगा। उसे लगा कि स्वयं उसकी बीमारी, मौत, अस्वास्थ्य के दुःखदायी विचार भी बहुत कुछ परेशानी के कारण थे। अब वह कोई चिंताजनक विचार अपने मन में न आने देगा। जितने क्षण जीना है, मौज –मजे में जीऊँगा जब संसार के सब जीव, पक्षी, कीट, पतंगे अंतिम पल तक आनंद से जीते हैं, तो भला मैं मरने से बहुत पहले अपने अंदर क्यों निराशा के घातक विचार लाऊँ? ठीक है, मरना होगा तो मर जाएँगे। अभी से क्यों फिक्र करूँ?

चिंता हटी, तो पुरानी स्मृति साफ हुई

उसने अपने बीते हुए जीवन पर विचार करना शुरू किया। उसकी स्मृति–पटल पर अपने शुभ चिंतकों की दी हुई सलाहें याद आने लगीं–

"कार्नेरी! अभी तुम समझते नहीं कि तुम्हारे इस अत्यंत अनियमित जीवन क्रम का फल क्या होगा? तुम समय पर खाने, समय पर विश्राम करने, सोने–जागने, किसी बात में भी ध्यान नहीं रखते। एक दिन तुम्हें अपने अस्त–व्यस्त अनियमित जीवन के लिए रो–रोकर पछताना होगा।"

उसे यह भी याद आया कि इस तरह के जबाब में उसने सलाह देने वाले हितैषी का कैसा मजाक उड़ाया था। उसने उत्तर में कहा था–

"बूढ़ों का स्वभाव होता है कि वे तरुणों को मौज उड़ाते देखकर चिढ़ते हैं और अपनी भड़ास तरह–तरह के उपदेश देकर और व्यर्थ की आलोचना करके निकाला करते हैं। वे चाहते हैं कि तरुण भी अपनी मौज–मस्ती को छोड़कर उनकी तरह ही बुढ़ापे का जीवन अपना लें। नाप–तोल कर खाएँ, घड़ी देखकर सोएँ और मौज करने की चीजों से परहेज करें। यह बँधी–बँधी सी कैदियों जैसी कोई जिंदगी है? व्यर्थ ही अपने को क्यों कैदी बना लिया जाए? जिंदगी तो मौज करने के लिए है। मनमाना खाओ–पीओ और आनंद

करो।'

उसे अपने शब्दों पर आज आत्मग्लानि हो रही थी।

सिनेमा के फिल्म की तरह उसके स्मृति पटल पर अपनी पुरानी अनियमित जिंदगी के अनेक पहलू दृष्टिगोचर होने लगे।

उसे साफ दिखाई दिया कि वह किस बेदर्दी से बेतहाशा जिंदगी काट रहा है। भक्ष्य–अभक्ष्य, उपयोगी–अनुपयोगी, उचित–अनुचित का कोई परहेज नहीं कर रहा है। आज उसे गलत और अविवेकपूर्ण दिखाई दिया। वह पछता रहा था।

उसे यह भी प्रतीत हुआ कि कब कौन सी गलती करने से कब कौन सा अतिचार, अनुचित आचार, व्यवहार करने से उसके स्वास्थ्य की क्या हानि हुई है और वह बीमार होते–होते आज मृत्यु शैय्या पर आ पड़ा है।

"अब यदि मुझे फिर भविष्य मिल जाए, तो मैं बहुत कुछ कर सकता हूँ। एक बार मुझे जिंदगी जीने का पुण्य अवसर मिलना चाहिए। हे ईश्वर, एक बार मेरी पुरानी गलतियों को बख्श दे और फिर नए सिरे से मुझे जीने दे।'

उसे अंदर अपनी अंतरात्मा से ऐसी ध्वनि आती प्रतीत हुई। "कार्नेरी इस बार तो अपनी अनियमित जिंदगी के लिए तुझे माफ किया जा रहा है, पर केवल इस शर्त पर कि तुम आगे के जीवन में परिष्कृत विचार, पवित्र आचार, युक्त आहार, निसर्ग सामंजस्य, समय की पाबंदी, पुरुषार्थ और परोपकार का ध्यान रखोगे।'

उसने मन ही मन कहा–"हे परमपिता, मुझे तुम्हारी ये सब शर्तें मंजूर हैं। नई जिंदगी चाहिए, चाहे वह किसी शर्त पर क्यों न हो!'

"तो यह लो, अभी से तू जीवन के बारे में सोच, यौवन के उल्लास में तन्मय हो, उज्ज्वल भविष्य का सतसंकल्प कर अपने समाज के लिए उपयोगी जिंदगी जीना शुरू कर। यह जिंदगी तुझे कुछ ऊँचे आदर्श के उद्देश्य से फिर दी जा रही है।'

वह ज्यों–ज्यों सृजनात्मक ढंग से सोचता, त्यों–त्यों उसके

विचार उज्ज्वल होते जाते। सुप्त मन से बीमारी के विचार हट गए। यौवन और जिंदगी की सरिता लहलहा उठी।

वह ज्यों–ज्यों जीवन में भविष्य में नियम निर्वाह और उपयोगी जीवन व्यतीत करने की बात सोचता, त्यों–त्यों उसके मन में एक उत्साह जागता, जिससे वह अपने आपको निरोग अनुभव करने लगता। डाक्टरों की चिकित्सा से पहले लाभ नहीं हो पा रहा था, पर अब वे ही दवाइयाँ अमृत की घुटी बन गईं। उसके मन में अपने स्वस्थ हो जाने का विश्वास हो गया था। यह आत्म विश्वास भी अब डाक्टरों के साथ था।

फिर क्या था एक ही सप्ताह में कार्नेरी स्वस्थ हो गया, पर दुर्बलता भी शेष थी। वह प्राकृतिक आहार, थोड़ा–बहुत प्रातःकाल भ्रमण, भगवत–पूजन, स्वस्थ विचारों में भ्रमण करने लगा। धीरे–धीरे दवाएँ कम करता गया। दूध, फल, शहद, खजूर, मेवे, अंजीर, किशमिश, टमाटर आदि उसके प्रिय भोजन बन गए। निराशापूर्ण चिंतन का त्याग कर उसने हितकर सुंदर साहित्य पढ़ना और स्वास्थ्य की दिशा में विचार करना आरंभ कर दिया।

इस नए ढंग से परिवर्तन करने का उसके स्वास्थ्य पर इतना अनुकूल प्रभाव पड़ा कि उसे अखंड यौवन में विश्वास जम गया। उसने इस नए जीवन को ईश्वर का उपहार समझा। परमात्मा का कार्य करने के लिए वह अब जी रहा है। यह समझकर उसने परोपकार को प्रधानता दी।

अब उसने प्राकृतिक जीवन को प्रधानता दी। समय पर सायंकाल नौ बजे सोता, प्रातःकाल ५ बजे शौचादि से निवृत्त होकर, स्नान करता, सद्साहित्य पढ़ता, किसी परोपकार के कार्य का श्रीगणेश करता और उसी में दिलचस्पी लेता है।

दवा खाने के लिए नहीं जीता, प्रत्युत जीने के लिए उपयोगी पौष्टिक आहार भी लेता। सिर्फ स्वाद के लिए माँस व मदिरा का सेवन उसने सदैव के लिए त्याग दिया। प्रत्येक कार्य के लिए समय

पालन करता, सदैव प्रसन्नचित्त रहता, चेहरे पर मधुर मुस्कान बनाए रहता और उपयोगी दिशा में ही सोचता।

पूर्ण स्वस्थ होने पर उसे लगा कि उसकी तरह स्वास्थ्य संबंधी नियमों को तोड़कर सजा पाने और फलस्वरूप बीमार रहने वाले अनेक लोग पड़े हैं। परोपकार के रूप में उसने अनुभवों का लाभ दूसरों को देने के लिए स्वास्थ्य संबंधी उपयोगी साहित्य लिखा, शुभ कार्यों के लिए सभा समितियों का गठन किया और स्वास्थ्य संबंधी प्रवचनों एवं भाषण मालाओं का आयोजन किया। दीर्घ जीवन और स्वस्थ रहने की शिक्षा के लिए उसने व्यायाम एवं स्वास्थ्य संबंधी संस्थाएँ बनाईं और लोक हितार्थ उनका संचालन किया।

उसने यह अनुभव किया कि व्यक्तित्व को परार्थ विकसित करने से लाभ होता है। दूसरों के लिए जीने से जीवन परिपुष्ट होता है। स्वार्थ की संकुचित भावनाएँ रोग व्याधि पैदा करने वाली हैं। अतः जहाँ उसने स्वास्थ्य के लिए बहुत से कार्य किए वहाँ जन–रुचि को परिष्कृत करने और मानसिक विकास करने के लिए सांस्कृतिक मनोरंजन के कार्यक्रम को प्रोत्साहित किया।

"बुढ़ापे की ओर बढ़ने पर यौवन काल की उच्छृंखलता और अनुत्तरदायित्व की भावना नष्ट हो जाने से अधिक आयु वाला आदमी निश्चिंत और प्रसन्न रहता है। जीवन के बाद इच्छाओं, महत्वाकाँक्षाओं और वासनाओं की कमी होने से वह बड़ा ही सुखी हो जाता है। उसके सारे उद्वेग और क्रोधादिक विकार नष्ट हो जाते हैं।

कार्नेरी के विषय में सबसे आश्चर्यजनक बात अभी कहनी शेष है। आपकी जिज्ञासा है कि आखिर यह क्या बात है?

रोग शैय्या पर जो व्यक्ति क्षण–क्षण मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था और जिसकी समस्त उम्मीदें सुप्त हो चुकी थीं, स्वस्थ और निरोग होने से वह जीवन के प्रति उल्लसित हो उठा। जीवन में उसे नया सौंदर्य और मिठास नजर आता। जीवन की उत्ताल तरंगों से बहकर उसने विवाह कर लिया।

उसके एक पुत्री हुई। वह बड़ी हो गई और २०–२२ वर्ष में उसने उसका भी विवाह किया। वह इस पुत्री के बच्चों से बहुत समय तक घिरा रहता था। सौ वर्ष तक वह इसी प्रकार सुख, शाँति और स्वस्थ का जीवन व्यतीत करता रहा। बच्चों से बहुत समय तक घिरे रहने के बाद हाथ में क्रास लेकर हँसते–हँसते उसने शरीर छोड़ा।

लोगों का कहना है कि कार्नेरी ने पूर्व निश्चित योजना के अनुसार जीवन और मरण दोनों को हँसते–हँसते वरण किया है। यदि वे चाहते तो इससे भी अधिक जीवित रह सकते थे, किंतु एक दृष्टिकोण से सौ वर्ष की शाँत और तृप्त जिंदगी मनुष्य के लिए वे पर्याप्त मानते थे।

जब वह मर रहा था, तो उसके ओंठ बुदबुदाए।

"आपका अंतिम संदेश क्या है?"

अटक–अटक कर लड़खड़ाते शब्दों में बोले–"जो मनुष्य मेरे आत्म अनुभूत जीवन के सात मूल–मंत्रों के अनुसार अपना जीवन संचालित करेगा, मेरा आशीर्वाद है कि वह कम से कम सौ साल की स्वस्थ जिंदगी भोग कर सूख पूर्वक संसार से विदा होगा।

"आपके सात अनुभूत महामंत्र क्या हैं?"

वे बोले–गिन लो और इन्हें भूलो मत। *१–निसर्ग सामंजस्य, २–समय का संयम, ३–युक्त आहार, ४–परिष्कृत विचार, ५–पवित्र आचार, ६–पुरुषार्थ और ७–परोपकार।*

वह ज्योति आज भी बीमारों का मार्गदर्शन कर रही है।

दीर्घ जीवन के आध्यात्मिक कारण

दीर्घ जीवन एवं निरोग्यता का कारण केवल खान–पान, आहार–विहार ही नहीं, वरन् मनोदशा भी है। कुविचारों में निहित रहने वाले व्यक्ति कितना ही बढ़िया खाएँ–पीएँ अपनी दुश्चिंताओं और दुर्भावनाओं के कारण स्वास्थ्य को खो बैठते हैं और आंतरिक आग में झुलसते हुए नारकीय जीवन जीते हैं। इसके विपरीत जिनके अंतःकरण शुद्ध हैं, जिनकी विचार भूमिका उच्चकोटि की है, वे

साधारण विहार रखते हुए भी शाँतिपूर्ण जीवन यापन करते हैं।

कागभुशुंडि जी अमर और दीर्घजीवी माने जाते हैं। एक दिन महिर्षि वशिष्ठ जी ने कागभुशुंडि जी से उनके दीर्घ जीवन का कारण पूछा तो उनने बताया कि–

भावाभावमयीं चिन्तामोहतानी हित्तान्विताम्।
विमृश्यात्मनि तिष्ठामि चिरंजीवाम्यनामयः
प्रशान्तं चापलं बीतशोकं स्वस्थं समाहितं।
मनो मय मने शान्तं तेन जीवाभ्यनामयः।
किमद्य मम सम्पन्नं प्रातर्वा भविता पुनः।
इति चिन्ताज्वरौ नास्तितेन जीवाभ्यनामयः।
जरामरण दुःखेषु राज्य लाभ सुखेषु च।
न विभेमि न हृष्यामि तेन जीवभ्यनामयः॥
अयं बन्धु परश्चायं ममायमयमन्यतः।
इति ब्रह्मन्न जानामि तेन जीवभ्यनामयः।
आहारविन्हरन्तिश्ठन्नुत्तिष्ठन्नच्छूवसन्स्वपन्।
देहोऽहमिति नो विदं तनोस्मि चिरजीवितंतः।
अपरिचलया शक्त्या सुदृशास्निग्धमुग्धया।
ऋजु पश्यामि सर्वत्र तेन जीवाभ्यनामयः।
करोमीशोऽपि नाकान्ति परितापे न खेदवान्
दरिद्रोऽपि न वाच्छामि तेन जीवाभ्यनामयः।
सुखितोऽस्मि सुखापन्ने दुःखितो दुःखितेजने।
सर्वस्य प्रिय मित्रं च तेन जीवाभ्यनामयः।
आपद्यचल धीरोऽस्मि जगन्मित्रं च सम्पदि।
भावाभावेषु नैवास्मि तेन जीवाभ्यनामयः।

योगवशिष्ठ ६।२॥१०–३५

"मेरे पास यह है, यह नहीं है, इस प्रकार की चिंता मैं नहीं करता, इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। मेरा मन शाँत, अचंचल, शोक रहित और समाहित रहता है, इसलिए दीर्घजीवन जीता हूँ।

आज मैंने कितना कमा लिया, कल कितना कमाऊँगा, ऐसा तृष्णा ज्वर मुझ पर नहीं चढ़ा रहता, इसलिए मैं निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। न तो मैं मौत, बुढ़ापे से डरता हूँ और न राज्य जैसे बड़े लाभ मिलने पर भी मुझे हर्ष होता है, यह मेरा भाई, यह शत्रु है, यह अपना है, यह पराया है, ऐसा भेदभाव मेरे मन में नहीं आता, इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। आहार में, विहार में, सोने जागने में, उठने–बैठने में किसी भी समय ब्रह्मभाव छोड़ देहभाव में नहीं भ्रमता इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ, अपने स्वरूप में अविचल भाव से स्थित रहता हूँ और आत्मशक्ति बनाए रखता हूँ, मधुर प्रेमभरी दृष्टि से सबको समान दृष्टि से देखता हूँ, सर्वत्र मंगल ही देखता हूँ, इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। समर्थ दृष्टि होने पर भी किसी को सताता नहीं, दूसरों के द्वारा अनिष्ट किए जाने पर क्षुब्ध नहीं होता, निर्धन होने पर किसी से आकाँक्षा नहीं करता, इसलिए दीर्घजीवन जीता हूँ। दूसरों को देखकर सुखी होता हूँ, दुःखियों को देखकर करुणा करता हूँ। सबको अपना प्रिय मित्र मानता हूँ, इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। आपत्ति आने पर विचलित नहीं होता हूँ, धैर्य को कभी भी नहीं छोड़ता, सुख के समय सबसे उदार व्यवहार करता हूँ, भाव और अभाव में एक सा रहता हूँ। इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ।'

वस्तुतः चित्त को शाँत, मस्तिष्क को सौम्य संतुलित, मन को शीतल संयत बनाए रखने वाले लोग निश्चित ही दीर्घ जीवन जीते हैं। सात्विक जीवनचर्या संतुलित श्रेष्ठ आहार–विहार, सतत् शारीरिक मानसिक श्रम और उत्कृष्ट चिंतन, मनन से दीर्घायुष्य एवं सफलताएँ निश्चित रूप से मिलते हैं।

विचारशील लोग दीर्घायु होते हैं

डा. एफ. ई. बिल्स, डा. लेलाड काडल, राबर्ट मैक करिसन आदि अनेक स्वास्थ्य शास्त्रियों ने दीर्घायु के रहस्य ढूँढे। प्राकृतिक जीवन, संतुलित और शाकाहार, परिश्रमशील जीवन, संयमित जीवन–शतायुष्य के लिए यही सब नियम माने गए हैं, लेकिन कई बार ऐसे

व्यक्ति देखने में आए जो इन नियमों की अवहेलना करके, रोगी और बीमार रहकर भी १०० वर्ष की आयु से अधिक जिए। इससे इन वैज्ञानिकों को भी शंका बनी रही कि दीर्घायुष्य का रहस्य कहीं और छिपा हुआ है। इसके लिए उसकी खोज निरंतर जारी रही।

अमेरिका के दो वैज्ञानिक डा. ग्रनिक और डा. बिरेने बहुत दिनों तक खोज करने के बाद इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचे कि दीर्घजीवन का संबंध मनुष्य के मस्तिष्क एवं ज्ञान से है। उनका कहना है कि अनुसंधान के समय ९२ और इस आयु के ऊपर के जितने भी लोग मिले वे सब अधिकतर पढ़ने वाले थे। आयु बढ़ने के साथ–साथ जिनकी ज्ञान वृद्धि भी होती है, वे दीर्घजीवी होते हैं, पर पचास की आयु पार करने के बाद जो पढ़ना बंद कर देते हैं, जिनका ज्ञान नष्ट होने लगता है, वे जल्दी ही मृत्यु के ग्रास हो जाते हैं।

दोनों स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मत है कि मस्तिष्क जितना पढ़ता है, उतना ही उसमें चिंतन करने की शक्ति आती है। व्यक्ति जितना सोचता, विचारता रहता है, उसका नाड़ी मंडल उतना ही तीव्र रहता है। हम यह सोचते हैं कि देखने का काम हमारी आँखें करती हैं, सुनने का काम कान, सांस लेने का काम फेफड़े, पेट भोजन पचाने और हृदय रक्तभ्रमण का काम करता है। विभिन्न अंग अपना–अपना काम करके शरीर की गतिविधि चलाते हैं, पर यह हमारी भूल है। सही बात यह है कि नाड़ी मंडल की सक्रियता से ही शरीर के सब अवयव क्रियाशील होते हैं इसलिए मस्तिष्क जितना क्रियाशील होगा शरीर उतना ही क्रियाशील होगा। मस्तिष्क के मंद पड़ने का अर्थ है शरीर के अंग–प्रत्यंगों की शिथिलता और तब मनुष्य की मृत्यु शीघ्र ही हो जाएगी। इससे जीवित रहने के लिए पढ़ना बहुत आवश्यक है। ज्ञान की धाराएँ जितनी तीव्र होंगी उतनी ही आयु भी लंबी होगी।

आक्सफोर्ड डिक्शनरी से "हैल्थ" का शाब्दिक अर्थ "शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा से पुष्ट होना" लिखा है। अर्थात हमारा मस्तिष्क

जितना पुष्ट रहता है, शरीर उतना ही पुष्ट होगा और मस्तिष्क के पुष्ट होने का एक ही उपाय है, ज्ञान वृद्धि। शास्त्रकारों ने भी ज्ञान वृद्धि को ही अमरता का साधन कहा है। भारतीय ऋषि–मुनियों का दीर्घजीवन इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। सभी ऋषि दीर्घजीवी हुए हैं, उनके जीवनक्रम में ज्ञानार्जन ही सबसे बड़ी विशेषता रही है। इसके लिए तो उन्होंने वैभव–विलास के जीवन तक ठुकरा दिए थे। वे निरंतर अध्ययन में लगे रहते थे, जिससे उनका नाड़ी संस्थान कभी शिथिल न होने पाता था और वे दो–दो, चार–चार सौ वर्ष तक हँसते–खेलते जीते रहते थे।

पुराणों के अध्ययन से पता चलता है कि वशिष्ठ, विश्वामित्र, दुर्वासा, व्यास आदि की आयु कई–कई सौ वर्ष की थी। जामवंत की कथा लगती कपोल–कल्पित है, पर यदि अमेरिकी वैज्ञानिकों का कथन सत्य है तो उस कल्पना को भी निराधार नहीं कहा जा सकता है। कहते हैं कि जामवंत बड़ा विद्वान था। वेद–उपनिषद उसे कंठस्थ थे, वह निरंतर पढ़ा ही करता था और स्वाध्यायशीलता के कारण ही उसने लंबा जीवन प्राप्त किया था। वामन अवतार के समय वह युवक था। रामचंद्र का अवतार हुआ तब यद्यपि उसका शरीर काफी वृद्ध हो गया था, पर उसने रावण के साथ युद्ध में भाग लिया था। उसी जामवंत के कृष्णावतार में भी उपस्थित होने का वर्णन आता है।

दूर ही क्यों कहें पेंटर मार्फेस ने ही अपने भारत के इतिहास में "नूमिस्देको गुआ" नामक एक ऐसे व्यक्ति का वर्णन किया है, जो सन् १५६६ ई० में ३७० वर्ष की आयु में मरा था। इस व्यक्ति के बारे में इतिहासकार ने लिखा है कि मृत्यु के समय भी उसे अतीत की घटनाएँ उतनी स्पष्ट याद थीं कि जैसे अभी कल की ही बातें हों। वह व्यक्ति प्रतिदिन ६ घंटे से कम नहीं पढ़ता था। डा. लेलार्डे कार्डेल लिखते हैं–मैंने शिकागो निवासिनी श्रीमती ल्यूसी जे. से भेंट की तब उनकी आयु १०८ वर्ष की थी। मैं जब उनके पास गया तब वे पढ़ रहीं थीं। बातचीत के दौरान पता चला कि उनकी स्मरण शक्ति बहुत

तेज है, वे प्रतिदिन नियमित रूप से पढ़ती हैं।

प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक डा. आत्माराम और अन्य कई वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है कि योग से अपने हृदय और नाड़ी आदि की गति पर नियंत्रण रखकर उन्हें स्वस्थ रखा जा सकता है। यह क्रिया मस्तिष्क से विचारों की तरंगें उत्पन्न करके की जाती है। अध्ययनशील व्यक्तियों में यह क्रिया स्वाभाविक रूप से चलती रहती है, इसलिए यदि शरीर देखने में दुबला है तो भी उसमें आरोग्य और दीर्घजीवन की संभावनाएँ अधिक पाई जाएँगी।

मस्तिष्क के क्षतिग्रस्त होने से शरीर बचा नहीं रह सकता। इससे साफ़ हो जाता है कि मस्तिष्क ही शरीर में जीवन का मुख्य आधार है, उसे जितना स्वस्थ और परिपुष्ट रखा जा सके मनुष्य उतना ही दीर्घजीवी हो सकता है। उक्त वैज्ञानिकों की यदि यह सम्मति सही है तो ऋषियों के दीर्घ जीवन का मूल कारण उनकी ज्ञान वृद्धि ही मानी जाएगी और आज के व्यस्त और दूषित वातावरण वाले युग में सबसे महत्वपूर्ण साधना भी यही होगी कि हम अपने दैनिक कार्यक्रमों में स्वाध्याय को निश्चित रूप से जोड़कर रखें और अपने जीवन की अवधि लंबी करते चलें।

स्वाध्याय एवं श्रेष्ठ विचारों का मनन करने में निरंतर जब मस्तिष्क इन्हीं प्राणवान गतिविधियों में संलग्न रहा आता है, तो निषेधात्मक हताशापरक या अवसाद मूलक विचारों को मस्तिष्क में जड़ जमाने और पैर फैलाने का समय ही नहीं मिल पाता तथा व्यक्ति की प्रखरता तेजस्विता बढ़ती रहती है। यही कारण है कि दीर्घजीवन का आनंद लेने में दो ही तरह के लोग सफल होते रहे हैं, निरंतर स्वाध्याय निरत एवं सृजनशील रहने वाले तथा सतत श्रम करते रहने वाले। आंतरिक दृष्टि से दोनों ही प्रकार के लोग मनोयोग पूर्वक निरंतर क्रियाशील रहने वाले अतः एक ही वर्ग के कहे जा सकते हैं।

वस्तुतः सतत क्रियाशीलता ही जीवन को सार्थक बनाती है

और फिर वह जीवन अवधि लंबी हो या छोटी। श्रमशीलता, गतिमयता ही जीवन को धन्य बनाती है। अतः ऐसी सुव्यस्थित श्रमशीलता ही साध्य है। जीवन में यदि उसका अभ्यास हो गया तो किन्हीं कारणोंवश अधिक लंबा जीवन नहीं जी सके, तो भी वह छोटा सा जीवन भी सार्थक ढंग से जी सकेंगे। यों प्रारब्ध विधान के कारण घटित होने वाली घटनाओं की बात छोड़ दें तो सतत अध्यवसाय, निरंतर शारीरिक मानसिक गतिशीलता सुदीर्घ, सफल एवं आनंदप्रद जीवन का आधार बनती है, यही प्रामाणिक निष्कर्ष सामने आता है।

सतत् श्रमशील रहें–दीर्घ जीवन जिएँ

प्रकृति का यह सामान्य निमय है कि जो प्राणी जितने समय में प्रौढ़ होता है, उससे पाँच गुना जीवन जीता है। नियमानुसार घोड़ा पाँच वर्ष में युवा होता है, तो घोड़े की उम्र २५ वर्ष से ३० वर्ष तक मानी गई है। ऊँट ८ वर्ष में प्रौढ़ होकर ४० वर्ष तक, कुत्ता दो वर्ष में विकसित होकर १० वर्ष तक हाथी ५० वर्ष में युवा होकर २००वर्ष तक जीवित रहता है। मनुष्य भी साधारणतया २५ वर्ष की उम्र में युवा होता है। अतः १०० से १५० वर्ष तक की उम्र मानी गई है।

शरीर और आयु विज्ञान के अमेरिकी विद्वान डाक्टर कार्लसन ने कहा है कि यदि प्रकृति के नियम और गणित के हिसाब से मनुष्य की आयु १५० वर्ष होती है, फिर भी मोटे रूप में उसको १०० वर्ष तो मान ही लेना चाहिए।

शताधिक जीने वाला व्यक्ति

जर्मनी के ऐल्फस्टेडी नगर का एक साधारण लकड़हारा आजकल पत्रकारों, नागरिकों तथा पर्यटकों के लिए गहरे आकर्षण का केंद्र बना हुआ है। उसके आकर्षक का कारण और कोई विशेषता नहीं है, उसकी विशेषता है उसका दीर्घ जीवन और पूर्ण स्वास्थ्य।

लोगों को उसके विषय में तब पता चला जब उसने अभी

हाल ही में अपना एक सौ छः (१०६) वाँ जन्म दिन मनाया और अपने परिचितों को चाय पिलाई। उसके जन्मदिन की चाय–पार्टी में शामिल होने वालों का कहना है कि श्री जोहन बोस्ट बड़े दिलचस्प और खुश मिजाज आदमी हैं। वह इस लंबी आयु में भी तरुणों की तरह चुस्त और फुर्तीले हैं। अपने एक सौ छः वें जन्म दिन की पार्टी में उन्होंने चाय और नाश्ता खुद तैयार किया और उत्साह के साथ खुद ही सबको सर्व किया। उनके काम की फुर्ती और सावधानी देखकर सहसा विश्वास नहीं होता कि वे सौ साल से अधिक आयु रखने वाले व्यक्ति हैं। उनकी विनोद प्रियता और कार्यकुशलता देखकर ऐसा लगता है कि मानों वे चालीस–पैतालीस के एक स्वस्थ प्रौढ़ हैं। उनकी सारी इंद्रियाँ और अवयव यथावत काम करते हैं। बालों की सफेदी के सिवाय उनके शरीर पर अग्रस्थ आयु का कोई चिन्ह नहीं है।

श्री जोहन बोल्ट जब हँसते हैं तब उनके दाँतों की चमक देखते ही बनती है और जब किसी की ओर ध्यान देते हैं, तब ऐसा लगता है, मानों उनकी पलकों में दो नीले बिल्लौर चमक रहे हों। उनके हाथ–पाँव सुडौल, सशक्त और बिना शिकन के हैं। चेहरे पर भी कहीं बुढ़ापे की झुर्री नहीं दिखलाई देती।

स्वाभाविक था कि लोग उनसे उनके दीर्घ जीवन और स्वास्थ्य के विषय में जिज्ञासा करते। श्री जोहन बोस्ट ने बतलाया कि मुझे तीन चीजों से सदा ही घृणा रही है और तीन बातों से सदा अनुराग। शराब, सिगरेट तथा आलस्य से मैंने कभी भी अपना संपर्क स्थापित नहीं किया। इसके विपरीत साधारण स्वस्थ भोजन, संयम और परिश्रम मेरे स्वभाव के अंग बने रहे और आज भी बने हुए हैं। शराब और सिगरेट न पीने के विषय में मैं इतना सख्त तरह का था कि बहुत बार मित्र संबंधी तक नाराज हो गए, किंतु मैने मानव जीवन के इन शत्रुओं को कभी हाथ नहीं लगाया। साधारण भोजन पर संतोष किया और अब तक अपना सारा काम अपने हाथ से ही करता हूँ।

सूर्योदय से एक घड़ी पूर्व उठना और रात को समय पर निश्चित सो जाना मेरे अटूट निमय रहे हैं। थोड़ा सा व्यायाम और प्रातः वायु सेवन का स्वभाव तो आज तक यथावत बना हुआ है। मेरा विश्वास है कि मेरे इन साधारण नियमों के पालन ने मुझे दीर्घजीवी बनाने के साथ स्वस्थ भी रखा है।

एक सौ इकसठ वर्ष का रूसी किसान

मास्को में शीरालीमिस्लीमोव नामक एक व्यक्ति का सार्वजनिक सम्मान किया गया और उसे रूस का एक नागरिक कहा गया।

श्री शीरालीमिस्लीमोव न तो कोई राज–नेता हैं और न कोई बड़े विद्वान। वे केवल अजरबैजान के एक साधारण किसान हैं। उनके सम्मान का कारण है, उनका "दीर्घ स्वस्थ जीवन"। अभी हाल ही में जब वह अपने स्वास्थ्य की परीक्षा कराने के लिए मास्को आए, तब उनकी आयु १६१ वर्ष की हो चुकी थी। डाक्टरों ने उनके शरीर की परीक्षा की। हृदय, आमाशय, कलेजे, गुर्दे, फेफड़े आदि का हर अंग और अवयव की पूरी तरह जाँच की और बतलाया कि श्री शीरालीमिस्लीमोव हर प्रकार से पूर्ण स्वस्थ हैं, न तो उनका, कोई अंग शिथिल हुआ है और न वे किसी रोग के शिकार हैं।

बात सही है। श्री शीरालीमिस्लीमोव की आँख, नाक, कान आदि इंद्रियाँ ठीक–ठीक काम कर रही हैं। उनके दाँत पूरी तरह स्वस्थ और दृढ़ हैं। इतना ही नहीं कि उनका शरीर ही स्वस्थ है, उनकी कार्यक्षमता बनी हुई है और वे अब भी अपने खेतों पर आठ–दस घंटे काम करते हैं। वास्तव में आज के सामान्य स्वास्थ्य और आयु को देखते हुए इन दीर्घ जीवी शीरालीमिस्लीमोव को मृत्युंजय ही कहा जा सकता है। जहाँ आज संसार की औसत आयु ३५–४० चल रही है, वहाँ १६१ वर्ष के दीर्घजीवी को और क्या कहा जा सकता है।

सम्मान आयोजन के समय श्री शीरालीमिस्लीमोव से उनके स्वस्थ तथा दीर्घजीवी होने का रहस्य बतलाने का अनुरोध किया

गया, तो उन्होंने बतलाया कि उनके दीर्घजीवी होने का कोई विशेष रहस्य नहीं है–'यह ईश्वर और सोवियत संघ की सुंदर व्यवस्था और शक्ति का मधुर फल है।' वैसे मैंने अपने जीवन में, जैसा कि मुझे याद है असंयम और अनियमितता को कभी स्थान नहीं दिया। अपना आहार–विहार ज्यादा से ज्यादा प्रकृति के अनुकूल रखा। अपने खाने–पीने के समय और वस्तुओं में असंयम नहीं करता। मेरा सदैव से स्वभाव रहा है कि मैं कभी बंद जगह में मुँह ढककर नहीं सोता। मैंने सुन रखा था कि ताजी हवा मिलती रहने से आदमी की तंदरुस्ती अच्छी रहती है। मैंने इस कथन को अपने जीवन में चरितार्थ होते देखा।

उन्हें ऐसा याद नहीं पड़ता कि वे कभी बीमार भी पड़े हों या शारीरिक निर्बलता के कारण कार्य बंद रखना पड़ा हो। आवसरिक अस्वास्थ्य को उन्होंने सदैव ही उपवास, स्वल्प भोजन या अधिक संयम बरत कर ठीक किया।

इसके अतिरिक्त मैंने तीन दुर्बलताओं को अपने जीवन में कभी न आने दिया–एक तो आलस्य, दूसरे निरुत्साह और तीसरे चिंता। सदैव समय से अपना पूरा काम किया, कोई भी कठिनाई अथवा समस्या क्यों न आ पड़ी हो मैंने अपना उत्साह कभी नहीं खोया और किसी बात पर निष्क्रिय बैठकर चिंता नहीं की। अपने कर्त्तव्य का समुचित पालन किया और उसका जो भी फल मिला उसे हर्ष पूर्वक स्वीकार किया और हर हानि लाभ में संतोष रखा। ईर्ष्या, द्वेष अथवा क्रोध की अग्नि में अपनी प्रसन्नता को कभी झुलसने नहीं दिया और जीवन पथ पर सदा सावधान होकर ही चला। ऐसी मेरी दिनचर्या तथा जीवनचर्या रही। मेरा विश्वास है कि मेरी इस दृढ़ता ने मुझे दीर्घजीवी होने में सहायता की है। मैं अपना कार्य स्वयं करता हूँ और आशा है कि बहुत समय तक करता रहूँगा।

अजरबैजान के पहाड़ी क्षेत्र में रहने वाले श्रमजीवी शीरालीमिस्लीमोव की तथ्यपूर्ण बातें सुनकर सभी उपस्थित जन

बड़े प्रभावित हुए और उन्होंने उनके मुख से दीर्घ जीवन का रहस्य सुनकर विश्वास किया। आशा है बहुत से लोग उसका लाभ उठाकर शतायु होने का प्रयत्न करें।

दीर्घ आयु प्राप्ति का रहस्य

अपने सेवा काल के पश्चात पूरे साठ वर्ष तक विश्राम भत्ता पाने वाले पोस्टमैन की मृत्यु अभी हाल ही में धनवाद में हुई है। मृत्यु के समय इस कर्मचारी की आयु १२५ वर्ष थी। जिन व्यक्तियों ने इस पोस्टमैन को कार्य करते देखा है, उनका कहना है कि इसने अपना सारा कार्य पैदल ही किया। जबकि अनेक पोस्टमैन डाक जल्दी बँट जाने की सुविधा हेतु साइकिल खरीद लेते हैं, पर इस व्यक्ति ने पैदल जाकर डाक बाँटना पसंद किया।

इस कर्मचारी के स्वस्थ रहने का रहस्य हर समय कार्य में लगे रहना ही था। उसने न कभी नशा किया और न क्रोध। शाँत स्वभाव के इस पोस्टमैन से जब कभी दीर्घ जीवन का रहस्य पूछा गया तो उसने यही उत्तर दिया कि कभी निठ्ठल्ला नहीं रहता, हर समय कुछ न कुछ कार्य करता ही रहता हूँ। अपने कार्य में व्यस्त रहने से ही प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ और दीर्घजीवी बन सकता है।

प्रायः रूस में लोग दीर्घ आयु प्राप्त करते हैं। वहाँ १०० वर्ष से अधिक आयु के लगभग तीस हजार व्यक्ति हैं, जिनमें ४ सौ महिलाएँ भी सम्मिलित हैं। ६४४ दीर्घ आयु प्राप्त व्यक्ति तो काकेसस में रहते हैं। रूसी वैज्ञानिक ने दीर्घ जीवन के संबंध में जो सर्वेक्षण किया है उससे बड़े महत्वंपूर्ण तथ्य सामने आए हैं।

वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि किसी कार्य को आनंद लेकर किया जाए तो वह महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। खान–पान की आदतों पर भी स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन निर्भर रहता है। लंबी आयु प्राप्त करने वाले ये व्यक्ति शराब नहीं पीते, यदि उसमें दस बीस शौकीन भी हैं तो अंगूरी शराब के। वे कभी धूम्रपान भी नहीं करते। अधिकतर पैदल चलते हैं और सारा समय

खुली हवा में व्यतीत होता है।

१५८ वर्षीय किसान मखदूम इदाजेम को सन् १९६५ में सोवियत सरकार ने आडर आफ रेड बैनर आफ लेबर से विभूषित करके सम्मानित किया था। वह मानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को अपना जीवन सरल बनाने के लिए शारीरिक श्रम करना चाहिए। इससे शरीर का प्रत्येक अंग सक्रिय रहता है। जो व्यक्ति आराम तलबी में जीवन व्यतीत करते हैं, उनके शरीर में घुन लग जाती है और समय से पहले ही वृद्धावस्था आ घेरती है।

बहने वाला जल सदैव स्वच्छ व स्वास्थ्यदायक रहता है। उसी प्रकार यौवन की शक्ति को बनाए रखने के लिए श्रम के महत्व को नहीं भुलाया जा सकता। इससे स्नायु तंत्र सक्रिय रहता है। जब उनसे एक बार यह कहा गया कि अब तो आपकी वृद्धावस्था है, अतः आराम करना चाहिए तो उन्होंने बहुत सीधा सा उत्तर दिया कि इस तरह का विचार घातक सिद्ध हो सकता है। मेरा तो यह अनुभव है कि जब तक जीवित रहे अपने शरीर, मस्तिष्क और आत्मा पर कार्य का बोझ डालना ही चाहिए। खाली बैठना शरीर और मन दोनों को हानि पहुँचाने वाला है।

जापान में सबसे अधिक उम्र की महिला श्रीमती कोवावासी यासू ने कभी भी तंबाकू व शराब को हाथ नहीं लगाया। सिर्फ सब्जियों पर गुजारा करने वाली यह ११८ वर्षीय महिला कभी बीमार नहीं पड़ी और न कभी उसे दवाइयों की ही आवश्यकता अनुभव हुई।

रजिस्ट्रार जनरल आफ इंडियन द्वारा आयोजित एवं सर्वेक्षण के अनुसार भारत में शतायु व्यक्तियों की सबसे अधिक संख्या उत्तर प्रदेश में है। इस समय भारत में जीवित शतायु व्यक्तियों की संख्या ७७ हजार है। जिसमें से २३,२५८ व्यक्ति उत्तर प्रदेश में हैं। सर्वेक्षण की सबसे अधिक दिलचस्प बात यह है कि अधिकांश शतायु व्यक्ति उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों के हैं, जो आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हैं।

संभवतः इन पिछड़े जिलों में रहने के कारण उन्हें श्रम की उपासना में अधिक समय देना पड़ता है और प्रकृति ने उन्हें वरदान स्वरूप दीर्घ आयु प्रदान की है।

फ्राँसिस एलेस्टिन नामक शतायु व्यक्ति ने लंबी आयु प्राप्त करने का रहस्य बताते हुए कहा है–'मैंने आज तक कार्य में कभी प्रमाद नहीं किया। सच्चाई और ईमानदारी से श्रम की उपासना में लगा रहा।' एलेस्टिन की ईश्वर में अटूट श्रद्धा थी और अपना बचा हुआ समय वह समाज कल्याण के कार्यों में लगाते थे।

ईरान के १८१ वर्षीय श्री सैयद अबू ताले व मोसावी के अनुसार दीर्घ आयु का रहस्य 'सुखी परिवार तथा कठिन परिश्रम है'।

अमेरिका के १२२ वर्षीय श्री चार्ली स्मिथ ने यह मत व्यक्त किया है कि मेरी लंबी आयु का कारण ईश्वर में विश्वास है। कश्मीर के सबसे वृद्ध व्यक्ति पीर मकबूल शाह का हाल में ही कोयल–मुगम गाँव में देहांत हुआ है। पीर अपने गाँव की मस्जिद का इमाम था, उसका संपूर्ण जीवन धर्म के अनुसार आचरण करने में ही व्यतीत हुआ था।

इलादी नामक महिला, जो सौ वर्ष से अधिक आयु प्राप्त कर चुकी है, का अधिकाँश समय ईश्वर उपासना और पीड़ित व्यक्तियों की सेवा में ही बीतता है। वह अपने व्यवहार में सदैव इस बात का ध्यान रखती रही कि शत्रुओं की अपेक्षा मित्रों की संख्या में वृद्धि हो। चिंताओं की उपेक्षा करने वाली यह महिला सादा जीवन को ही अपना उद्देश्य बनाए रही है।

१०२ वर्षीय श्रीमती डोरा फेलिंग का यह मत है कि यदि व्यक्ति ईश्वर पर विश्वास रखकर सच्चाई और ईमानदारी के साथ नेकी की राह पर चलता रहे तो वह दीर्घायु अवश्य ही प्राप्त करता है।

श्रुति कहती है–

"शतं जीव शरदो वर्धमानः"

संसार के मनुष्यों! जीवन शक्ति को इस प्रकार व्यय करो कि सौ वर्ष जीवित रह सको। सौ वर्ष तक उन्नतिशील जीवन व्यतीत करना चाहिए।

सन १९५८ में सोवियत पत्रों में एक गाँव में मनाए गए एक अजीब विवाह उत्सव का समाचार प्रकाशित हुआ था। यह विवाह रजत या स्वर्ण यहाँ तक कि हीरक जयंती भी नहीं था। पति का नाम मद अदामोव और उनकी पत्नी मन्ना अलीएवा ने अपने दांपत्य का सौवां वसंत मनाया था, जिसका अभी तक कोई नाम नहीं रखा गया है। इसी प्रकार वहाँ अभी जनवरी १९८१ में मंगोलिया प्रांत के एक दंपत्ति ने अपने विवाह के सौ वर्ष पूरे किए व उत्सव मनाया।

रूस की ही एक महिला तोपे आबजीव ने वास्तव में दीर्घ जीवी होने का उच्च स्तर कायम किया है। हाल ही में १८० वर्ष की आयु में उनका देहांत हुआ था। फिर भी लोग गलती से यह मान लेते हैं कि दीर्घायु पर्वतों पर रहने वाले काकेशियाई जनतंत्रों के निवासियों का ही सौभाग्य है। इसके विपरीत आँकड़ों के अनुसार वृद्ध लोगों की संख्या सोवियत संघ में है, वहाँ दो लाख से अधिक वृद्ध नामाँकित किए गए हैं, जो देश के विभिन्न भागों में बसते हैं। मास्को, लेनिन ग्राड, यूक्रेन तथा वेलो इत्यादि भागों में दीर्घजीवी रूसियों की संख्या है।

काकेशस की तुलना में साइबेरिया में सौ साल की दीर्घायु वालों की संख्या तिगनी है, जबकि याकूतिया की कठोर जलवायु में उनकी संख्या अबखाजिया के समृद्ध जिलों की तुलना में कहीं अधिक है।

ऊपर लिखे उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि आज की इस बीसवीं सदी में भी दीर्घजीवी होना असाधारण सी बात है। हम मनुष्य के जीवन की सीमा सौ वर्ष ही मानते हुए आश्चर्य करते हैं।

कुछ तो पचास वर्ष को पार करते ही निराश हो वृद्ध जैसा अनुभव करने लगते हैं। अपना दैनिक कार्य छोड़ शिथिल हो मौत का रास्ता देखा करते हैं। उनके मन में एक ऐसी जहरीली मनःस्थिति का निर्माण हो जाता है, जो बरबस वृद्धावस्था घर कर लाती है।

रुसी मनोवैज्ञानिक अब इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि प्राकृतिक वृद्धावस्था में अंतर है और समय से पहले के बुढ़ापे के लिए स्वयं मनुष्य ही दोषी है। जीवांगों के मुख्य कार्य स्पष्ट रूप में केंद्रीय स्नायु तंत्र की स्थिति और मस्तिष्क–ब्राह्मक पर निर्भर करते हैं। हमारे जीवांगों में होने वाली संश्लिष्ट और प्रमुख प्रक्रियाओं में मस्तिष्क–ब्राह्मक सक्रिय भाग लेते हैं। उन्हीं में आयु बढ़ाने की प्रक्रिया निहित है। अब यह साबित हो चुका है कि ब्लड प्रेशर धमनियों की कठोरता और केंसर जैसे स्वास्थ्य के शत्रु केंद्रीय स्नायु तंत्र में लंबी गड़बड़ी के कारण पनपते हैं। यह भी विदित होता जा रहा है कि तंबाकू तथा शराब में पाए जाने वाले विष हमारे स्नायु–तंत्र और रक्त धमनियों के के लिए छिपे हुए घातक विष हैं और शरीर को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं।

रूसी वैज्ञानिक इस राय पर आए हैं कि यौवन और शक्ति को बढ़ाए रखने वाला तत्व कार्य (कार्यशीलता) है। अधिक काम करने से चिंताएँ भी कम सताती हैं और शरीर एक शिकंजे में कसा रहता है। उसमें आलस्य का ढीलापन नहीं आने पाता। कुछ उम्र बढ़ जाने पर अनेक लोग यह गलती करते हैं कि वे अपना चलना–फिरना, खेत जोतना, बोना, टहलना, घूमना या शरीर के अन्य अंगों से श्रम करना छोड़ देते हैं। काम में न आने से अनेक अंग जंग लगकर अपनी स्वाभाविक कार्य शक्ति छोड़ने लगते हैं। उन्हें निष्क्रिय रहने की आदत पड़ने लगती है। फलतः कार्यविहीन होकर वे अव्यवस्थित और बेकार होने लगते हैं।

रूसी शरीर विज्ञान–शास्त्री अकाडमिशियन पावलोव के शब्दों में प्रत्येक शरीर एक चलता फिरता जीव है। अपने जीवन काल में ही

वह एक निश्चित गति अथवा ढर्रा बना लेता है। जितने दिनों तक उसे उसका यह सौंपा हुआ कार्य दिया जाता रहता है, उतने दिन तक तो वह बराबर चलता रहता है, पर ज्यों–ज्यों ही वह कार्य कम होने लगता है, त्यों–त्यों उसमें पाचन विकार होने लगता है, रक्त कम बनता है, फलतः कर्म शक्ति के साथ–साथ शरीर शक्ति भी कम होती जाती है। यदि इसी ढर्रे पर उसे चलते रहने दिया जाए, या जबरदस्ती उससे यह शारीरिक कार्य लिया जाए तो निश्चित ही वह कुछ वर्षों के लिए युवक बना रह सकता है।

रूसी लेखक इवान पत्रोवचि कहा करते थे, "एक क्लर्क अपना काम करते हुए जो बहुत ज्यादा–कठिन नहीं होता, ७० वर्षों तक ठीक चलता रहता है, परंतु ज्यों ही वह उसे छोड़कर अवकाश ग्रहण करता है और फलतः रोज का ढर्रा छोड़ देता है, तो शनैः–शनैः उसके शरीर के अवयव ढीले हो कर काम करने में असमर्थ हो जाते हैं और वह ७५–८० का होते–होते मर जाता है। बढ़ती आयु में शारीरिक या मानसिक कार्य छोड़ देने वालों में से बहुतों का आमतौर पर यही बुरा हाल होता है। हमें ऐसे अनेक मामलों का पता है, जिनमें अपेक्षाकृत स्फूर्तिवान, प्रसन्नचित तथा हृष्ट–पुष्ट व्यक्ति पेंशन अथवा अवकाश ग्रहण करते ही सहसा निर्बल हो गए और बीमार पड़ गए। यही कारण है कि अवकाश ग्रहण करने के बाद व्यक्ति को कदापि काम–काज करना पूरी तरह नहीं छोड़ना चाहिए। उसे कुछ हलके काम, बागवानी जैसे शौकिया कार्य यहाँ तक कि टहलना, घूमना, गौ सेवा, घर की सफाई, स्वयं अपने मैले वस्त्र धोना और संभव हो तों व्यायाम और मालिश भी करना चाहिए। शरीर को अधिक से अधिक सक्रिय और गत्यात्मक बनाए रखना चाहिए इसी से वह अधिक घूमने फिरने के कारण ही बहुत लंबी आयु तक सक्रिय रहता है।"

अतएव दीर्घायु की प्रमुख सबसे बड़ी दवा कार्य है। खूब काम कीजिए। शरीर को अधिक चलाइए, श्रम करते रहिए। काम करते

रहने से आपका शरीर अभी बहुत दिन चल सकता है। कार्य से ही मनुष्य की सृष्टि हुई तथा यह क्रियाशीलता ही अंत तक उसे स्वस्थ बनाए रखने वाली है।

सात्विक आहार–विहार का उपहार दीर्घायु

आज आप मेरे मेहमान हैं। लोग यह सुनें कि आजीवन साधारण भोजन करके भी १५२ वर्ष की आयु तक जिया जा सकता है, आपके प्रति ऐसा सम्मान व्यक्त करने के लिए ही राज भवन ने प्रीत–भोज का आयोजन किया है, यह शब्द सुनकर इंगलैंड के सम्राट चार्ल्स प्रथम ने दीर्घजीवन प्राप्त थामस को अपने पास बैठा लिया। फोटो खींचे गए, भेंट दी गई। जितना संभव था सम्मान किया गया। उस क्षण थामस अपने आपको बादशाह से कम अनुभव नहीं कर रहा था।

उस बेचारे को क्या पता था कि जिन्हें शान–शौकत का जीवन कहते हैं, जहाँ प्रतिदिन मेवे, मिष्ठान्न, पूड़ी, पकवान पर हाथ साफ किए जाते हैं, उन पर शीघ्र मौत की छाया इसलिए मडराती रहती है कि अस्वाभाविक जले–भुने गरिष्ठ आहार के कारण उनके पेट खराब रहते हैं, मन खराब रहते हैं, शराब पीना पड़ता है, संयम नष्ट करके अपना आरोग्य नष्ट कर देना पड़ता है। यह पता होता तो बेचारा उस क्षणिक सम्मान की प्रसन्नता के साथ अपने प्राण न गँवा देता।

आश्चर्य नहीं सत्य कि उसने जैसे ही प्रीति–भोज समाप्त किया उसकी मृत्यु हो गई। १५२ वर्ष की आयु में उसका शरीर इतना जर्जर हो चुका होगा कि वह अधिक परिश्रम नृत्य–गीत की थकान सहन न कर सका होगा। संभवतः आप यह सोच रहे हों, पर ऐसा नहीं–१५२ वर्ष की आयु होने पर भी थामस पूर्ण स्वस्थ थे, कच्चा खाना बखूबी हजम कर सकते थे, ८ घंटे की भरपूर मेहनत भी कर सकते थे, शव की जाँच करने वाले डाक्टर ने बताया–मृत्यु तो गरिष्ठ भोजन के कारण हुई है। वही गरिष्ठ भोजन जिसे पाने में

भारतीय अपना गौरव समझते हैं। अनुमान लगाया जा सकता है कि जब एक बार के गरिष्ठ भोजन ने एक व्यक्ति के प्राण ले लिए तो अभ्यास में आए रोज–रोज के जले–भुने तले आहार से अधिकांश लोगों के पेट, स्वास्थ्य और जीवन की क्या स्थिति होगी?

स्वास्थ्य का संरक्षण और संवर्धन सरल है। यदि सादगी का सरल स्वाभाविक जीवन यापन पसंद करें तो बिना किसी बड़ी जानकारी का संग्रह किए–बिना कोई बहुमूल्य आहार खरीदे बिना किसी दवा–दारू का उपयोग किए दीर्घजीवी हो सकते हैं और बीमारियों से बचे रहकर परिपुष्ट जीवन जी सकते हैं। बुद्धिमत्ता के नाम पर कृतिमत्ता अपनाकर ही वस्तुतः हमने अपने स्वास्थ्य का सर्वनाश किया है।

इन दिनों जिसे देखें वही कब्ज का मरीज पाया जाता है। यदि सबेरे का नाश्ता छोड़ दिया जाए और दिन में केवल दो बार ही भोजन किया जाए तो कब्ज से निन्यानवे प्रतिशत व्यक्तियों को छुटकारा मिल सकता है।

महात्मा गाँधी ने अपने एक संस्मरण में लिखा है–जोहांसवर्ग (दक्षिण अफ्रीका) में मुझे कब्ज रहता था और कभी–कभी सिर भी दुखा करता था। खाने–पीने में पथ्य का ध्यान रखता था, पर उससे भी मैं रोग मुक्त न हो सका। सोचता था दस्तावर दवाओं से छुटकारा मिल जाए तो अच्छा हो। इन्हीं दिनों मैंने मैनचेस्टर (इंगलैंड) में हुई नो ब्रेक फास्ट एसोसिएशन की स्थापना का समाचार पढ़ा। उसकी दलील थी–अंग्रेज बहुत बार और बहुत मात्रा में खाते हैं। फलतः रोगी बनते हैं। यदि उस व्याधि से बचना हो तो सबेरे का नाश्ता तो बिल्कुल ही छोड़ देना चाहिए। मुझे अपनी भी आदत अंग्रेजों जैसी लगी। सोचा नाश्ता छोड़कर देखूँ। सो छोड़ दिया। कुछ दिन तो अखरा, पर सिर दर्द बिल्कुल मिट गया। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि अधिक खाने के कारण ही कब्ज रहता था और सिर दर्द होता था।

मैदे से बनी डबल रोटी, बिस्कुट और माँसाहार ही इन दिनों

सभ्य समाज का प्रमुख भोजन है। जबकि ये दोनों ही वस्तुएँ स्वास्थ्य के लिए घातक हैं।

मैदे से बनी सफेद रोटियाँ खाने का प्रचलन बढ़ रहा है। अधिक पीसने और चोकर निकल जाने से मैदा एक प्रकार से विटामिनों व खनिज लवणों से रहित ही रह जाती है। कुछ समय पूर्व अमेरिका में मैदा को अधिक उपयोगी बनाने की दृष्टि से आटा मिल वालों ने कई प्रकार की मिलावटें करने के प्रयोग कराए थे। उन प्रयोगों में नोइट्रोजन टिक्लोराइड नामक पदार्थ का सम्मिश्रण भी था। इस प्रकार की मैदा से बनी रोटियाँ कुत्तों को खिलाई गईं तो उन्हें हिस्टीरिया आने लगा। फलतः उस देश के फूड एंड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन ने इस प्रकार के सम्मिश्रण पर रोक लगा दी। इसी प्रकार का एक दूसरा प्रयोग जिसमें क्लोराईन डाक्साइट मिलाकर मैदे को उपयोगी बनाने का प्रयोग किया गया, पर उसे भी हानिकारक घोषित करना पड़ा।

बहुभोजन और माँसाहार के गुण बहुत गाए जाते हैं, पर वस्तुतः यह बहुत ही हानिकारक भोजन है। विश्व विख्यात पहलवान जैविस्को को जब भारतीय पहलवान गामा ने पछाड़ दिया तो उसे विश्व विजयी उपाधि मिली। गामा का भीमकय शरीर देखते ही बनता था, उसे उन्होंने बड़े प्रयत्नपूर्वक बहुत व्यायाम और कीमती खुराक की प्रचुर मात्रा लेकर बनाया था। उनके दैनिक भोजन में २० किलो दूध, १ किलो घी, १ किलो बादाम पिस्ता, ६ किलो फल और ३ किलो माँस सम्मिलित था। दंड बैठक की हजारों की संख्या में नित्य करते थे। कुश्ती तथा दूसरे व्यायाम भी उनकी दिनचर्या के अंग थे।

जवानी में कई कुश्तियाँ उनने पछाड़ीं और विश्व विजयी बने, पर बुढ़ापा बुरी तरह कटा। उन्हें श्वाँस, खांसी आदि कितनी ही बीमारियों ने आ घेरा और अंततः हड्डियों का ढाँचा बनकर बहुत कष्टपूर्ण जीवन बिताते हुए मृत्यु के मुख में चले गए।

भारत जैसे गरीब देश के लोगों का काम बहुमूल्य घी, मेवे

आदि के बिना भी आसानी से चल सकता है, यदि वे अपने आस-पास बिखरी पड़ी सस्ती, किंतु बहुमूल्य वस्तुओं के गुणों के बारे में जानें और उनका उपयोग करना सीखें।

गाजर बहुत सस्ती चीज है, पर गुणों की दृष्टि से उसे बहुमूल्य फलों की श्रेणी में रखा जा सकता है। गाजर में विटामिन ए विशेष मात्रा में और विटामिन बी.सी.जी. और के. असाधारण मात्रा में पाए जाते हैं। गाजर के ताजा रस में सोडियम, पोटेशियम, कैलशियम, मैगनेशियम, सल्फर, सिलकन और क्लोराइन आदि रसायनों की उपयोगी मात्रा पाई जाती है। गाजर में १० प्रतिशत तक ऐसी शकर पाई जाती है कि जो बिना जिगर पर अतिरिक्त भार डाले सहज ही हजम हो सके। स्टेरेलटी-इन डावरिन ग्लेंडस एड्रेनल्स, मोनाडस डेर्माटिट्स ओफथोलिमिया, कंलूडिबिटिस कुछ रोग ऐसे हैं, जिनके लिए गाजर रामबाण औषधि सिद्ध हो सकती है।

भारत सरकार के हैल्थ वुलेटिन नं २३ के अनुसार आँवले में विटामिन सी की पर्याप्त मात्रा रहती है। उसमें प्रोटीन, चिकनाई, खनिज तत्व, कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, फास्फोरस सरीखे उपयोगी पदार्थ भी रहते हैं। प्रति सौ ग्राम आँवले में १.२ मिली ग्राम लोहा और प्रति सौ आँवलों में ६०० मिली ग्राम विटामिन सी रहता है।

बादाम, पिस्ते, काजू जैसे मूल्यवान मेवे बड़े आदमी खाएँ सो ठीक है, पर गरीब अपना वही काम मूँगफली से भी चला सकते हैं। वस्तुतः मूँगफली किसी भी प्रकार घटिया नहीं है। इसी प्रकार अन्यान्य सस्ती शाक-भाजियाँ और ऋतु फल हमारे लिए बहुमूल्य पदार्थों की तुलना में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं और सरलतापूर्वक मिल सकते हैं।

पेट में कब्ज होने पर उपवास का सहारा लेकर हम सहज ही अपनी चिकित्सा आप कर सकते हैं और खोई हुई पाचन शक्ति को पुनः प्राप्त कर सकते हैं, इनमें से यथासमय उपयुक्त उपवास चुन लिए जाया करें, ताकि पेट की स्थिति ठीक बनी रहे और अनेकानेक

बीमारियों में फँसने का दुर्भाग्यपूर्ण अवसर न आए। दस उपवास निम्नलिखित हैं–

१–प्रातःकालिक उपवास अर्थात नाश्ता छोड़ देना। २–सायंकालिक उपवास, दोपहर को एक बार ही भोजन करना, रात्रि का भोजन बंद कर देना। ३–एकहारोपवास–एक समय में एक ही वस्तु खाना। जैसे दोपहर को रोटी खानी है तो शाम को केवल शाक अथवा दूध। ४–रसोपवास–फलों के रस अथवा सब्जियों के सूप (रसा) पर रहना, ५–फलोपवास–केवल फलों पर रहना, ६–दुग्धोपवास–चार पाँच बार जितना पच सके उतना दूध लेकर रहना, ७–तक्रोपवास–छाछ पर रहना, ८–पूर्णोपवास–केवल जल पीकर रहना, ९–साप्ताहिकोपवास–सप्ताह में एक दिन केवल जल लेकर अथवा दूध, रस, सूप आदि पीकर उपवास करना। (लघु उपवास–सामान्य भोजन की अपेक्षा आधे परिमाण में खाना)।

कठिन रोगों के निवारण के लिए यदि औषधियों की आवश्यकता पड़े तो उसके लिए स्थानीय क्षेत्र में उगने वाली जड़ी–बूटियों के आधार पर चिकित्सा करना ऐलोपैथिक तीव्र औषधियों की अपेक्षा कहीं उत्तम है। संत विनोबा का सुझाव है कि हर गाँव में कुछ वनस्पतियाँ लगा देनी चाहिए। स्थानीय रोगों के लिए स्थानीय वनस्पतियों का ताजा रस जितना उपयोगी होगा उतना गुण बाहर की दवाओं में नहीं हो सकता। सीधी–सस्ती–जड़ी–बूटियों का उपयोग प्राकृतिक चिकित्सा के अंतर्गत ही समझा जाना चाहिए।

रोग निवारण के लिए औषधियों पर अधिक निर्भर रहना और उससे बड़ी–बड़ी आशाएँ करना ठीक नहीं। आपत्ति काल में भी किसी समय उसका उपयोग हो सकता है, पर साधारणतया उससे जितना बचा जा सके, उतना ही उत्तम है। औषधियों के संबंध में विशेषतया ऐलोपैथिक दवाओ के संबंध में कुछ अनुभवी लोगों के अभिमत इस प्रकार हैं।

औषधियों में से अधिकतर मारक गुणों से युक्त होती हैं।

उनमें सृजनात्मक क्षमता किंचित ही रहती है। दवाओं की प्रत्येक खुराक मनुष्य की जीवन शक्ति को न्यून करती जाती है।

आरोग्यविद्या विशारद डोंयल्ड सिंपसन का मत है कि वर्तमान में जीवनयापन में जो जटिलताओं और विषमताओं का प्रवेश हो गया है, उनके रहते हुए भी मनुष्य अपनी इच्छानुसार आयु को लंबा बना सकता है। अब वह समय भी अधिक दूर नहीं गया है, जब हमारे पुरखे मनमानी उम्र उपभोग करते थे।

अपनी नियमित दिनचर्या के कारण पितामह भीष्म चोटों और घावों से क्षतविक्षत होते हुए भी उत्तरायण सूर्य आने तक हठात जीवन धारण किए रहे। राजा सत्यवान, मार्कण्डेय आदि आप्तपुरुषों ने इच्छानुवर्ती आयु प्राप्त की। सोहलवीं सदी में इटली का एक साधारण नागरिक लुई कोरनारी अपनी संयम जीवनचर्या के कारण दो सौ वर्ष से अधिक जीवित रहा। उसने कभी भी माँस, शराब आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन नहीं किया था। खाओ, पिओ और मौज करो की नीति नितांत भ्रामक है। इससे जीवन शक्ति का क्षय होता है। मृत्युकाल पूर्व निश्चित है, यह विश्वास मानकर जीने वाले, जो जी में आए कर डालने वाले ही असमय मौत को निमंत्रण दे देते हैं।

इस संबंध में प्रमुख अनियमितता है आहार की और वैज्ञानिक जानकारी का अभाव। केवल स्वाद के लिए चटपटे मसालेदार खाद्य पदार्थ जुटाने और फिर उन्हें दिन में कई बार जब जी में आए पेट की आवश्यकता व स्थिति का विचार किए बिना उदरस्थ करते रहने की आदत अत्यंत दोषपूर्ण है। अधिक से अधिक प्राकृतिक नियमों के समन्वय से ही इस दिशा में सुधार होना संभव है। मिताहार भी उतना ही आवश्यक है। मैसूर निवासी विश्वसरैया शतायु होते हुए भी ५० वर्ष के लगते हैं। चुस्त व सजग हैं। इसका कारण वे व्यायाम और मिताहारी होना बताते हैं। त्रिवेन्द्रम आयुर्वेद कालेज के दीर्घायुषी वर्तमान प्रिन्सपल का तो गत ३० वर्ष तक वजन एक सा बना रहा। वे स्वास्थ्य के चार प्रयोग बताते हैं। १–नित्य तेल मालिश, २–

नियमित व्यायाम ३–छाछ और ४–मिताहार।

ब्राजील के वयोवृद्ध प्राध्यापक का कहना है कि संयत जीवन से १२० वर्ष जीना संभव है, वशर्ते कच्चा खाएँ, ताजा खाएँ और खुली वायु का अधिकाधिक सेवन करें। वे भोजन को ३२ बार चबाकर निगलने पर अधिक जोर देते हैं। संसार के सबसे अधिक दीर्घजीवी बलगेरिया के लोग हैं। वैज्ञानिकों ने इसकी गहन शोध की और बताया कि इसका मामूली सा कारण है और वह यह है कि यहाँ के लोग आहार के संबंध में बहुत सतर्कता बरतते हैं।

आहार के संबंध में यह विशेष उल्लेखनीय है कि सच्ची व परिपक्व भूख लगने पर ही खाना खाएँ। रूस के स्वास्थ्य विशेषज्ञ ब्लाडीमार कोरेचोवस्को का मत है–भूख से जितना अधिक खाते हैं, समझना चाहिए कि उतना ही विष खाते हैं।

केवल आहार की ओर सावधानी बरतना पर्याप्त न होगा वीर्य रक्षा उतना ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। क्षणिक सुख के लिए अपना जीवन तत्व निचोड़ते रहने वालों को असमय मौत का शिकार होना पड़ता है। ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन जीने से शक्ति बढ़ती है, ओजस निखरता है और आयु लंबी होती है। महात्मा गाँधी ने ३६ वर्ष की उम्र में ब्रह्मचर्य के महत्व को समझा और उसका पालन किया। वे कहा करते थे कि मैं १२५ वर्ष जीऊँगा। ८० वर्ष की आयु में वे पूर्ण निरोग थे। गोली न मारी जाती तो उनकी इच्छा निश्चय ही पूर्ण होती।

अनुभवों का सार

अमेरिका के एक डाक्टर ने सौ दीर्घजीवी मनुष्यों के अनुभवों को एकत्रित करके यह सार निकाला कि १–चिंताओ को अपने पास न फटकने दें और निरंतर प्रसन्न रहने से, २–भोजन खूब चबा–चबाकर खाने से ताकि दाँतों का काम पेट को न करना पड़े, ३–हरी साग–सब्जियों और फलों का सेवन करने से, ४–चरबीदार पदार्थों से दूर रहने से मनुष्य उत्तम स्वास्थ्य और लंबी आयु को प्राप्त कर सकता है। अमेरीकी के डा. शरमन ६८ वर्ष की आयु में भी

नौजवानों की तरह स्फूर्ति के साथ काम करते देखे गए हैं। वे अनुभव के आधार पर कहते हैं कि फल, दूध और छिलके सहित अन्न के सेवन से मनुष्य अपनी आयु को १० वर्ष बढ़ा सकता है। वे मिल में पिसे आटे और साफ किए चावल को भी इस्तेमाल न करने पर जोर देते हैं।

अमेरिका के कुछ अन्य दीर्घजीवियों के क्रियात्मक अनुभव देखिए

रेनबोर्न–मैंने प्रति सप्ताह पचास मील पैदल चलने का नियम बनाया हुआ है। इसी कारण मुझ में अभी तक ७२ वर्ष की आयु में भी नौजवान सा रक्त प्रवाहित होता दीखता है। मेरा अनुभव है कि पैदल चलने से हाजमा बढ़ता है, शरीर के विकार दूर होते हैं। फेफड़े अपना काम अच्छी तरह से करने लगते हैं। यह एक प्राकृतिक व्यायाम है। इसके साथ–साथ सिगरेट, शराब और चाय को भी छोड़ देना चाहिए।

लुई क्रेमर के भी इसी प्रकार के अनुभव हैं। वह लिखते हैं कि पिछले पचास वर्षों में मेरे घूमने का प्रोग्राम नियमित रहा है। २३ वर्षों से तो मैं प्रतिदिन ३०–४० मील चलता रहा हूँ। शराब का सेवन तो कई वर्षों से छोड़ रखा है। चाय काफी और सिगरेट की ओर तो मैंने कभी देखा ही नहीं। इनसे मुझे घृणा हो गई। शाम को दूध, भाजी और फल लेता हूँ। बिना छाने आटे की रोटी खाता हूँ। दूध और फलों का रस तो मुझे बहुत अच्छा लगता है। जिनका स्वास्थ्य गिर चुका हो, उनको मैं यह कहूँगा कि खूब पैदल चलो और उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त कर लो।

वैंजामिन जिनकी अयु ११४ वर्ष की थी, अच्छे स्वास्थ्य के उपाय बताते हुए लिखते हैं कि भोजन को कम खाना चाहिए और अधिक चबाना चाहिए। मोटर आदि पर बैठने का स्वभाव न बना कर पैदल चलने की आदत डालनी चाहिए। हँसना खूब चाहिए। विपत्तियाँ आएँ तो उन्हें हँस–हँस कर झेलना चाहिए। यदि उनके चंगुल में फँसकर चिंताग्रस्त हो गए हों तो उससे स्वास्थ्य को धक्का लगेगा। अधिक और हानिकर पदार्थों के सेवन से पेट के साथ अत्याचार

नहीं करना चाहिए। माँस से दूर रहो, शाकाहारी बनो।

विक्टर डेन स्वास्थ्य को गिराने वाले अन्य तत्वों से बचने का उपाय बताते हुए लिखते हैं–काम, क्रोध, ईर्ष्या, घृणा आदि मनोविकारों से दूर रहना चाहिए। इनके प्रयोग से शरीर में विष उत्पन्न होता है और परिणाम स्वरूप आयु कम होती है।

बेलगाँव के ८० वर्ष के श्री कोंकण का कहना है कि खेतों की स्वच्छ वायु का सेवन करो। दूध ओर ताजी सब्जियों को प्रयोग में लाओ। रात को जल्दी सोने और प्रातःकाल जल्दी उठने का कार्यक्रम बनाना चाहिए।

१२६ वर्ष के एक ईरानी सज्जन की राय है कि चिंता शून्य रहना ही दीर्घ जीवन का रहस्य है। काम न करो का मतलब है शरीर को जंग लगाना। श्रम को पूजा समझकर करना चाहिए।

१६० वर्ष की श्रीमती जोसफ रींगल ने अपने दीर्घ जीवन का रहस्य मिताहार को बताया है।

सर तेमुल जी लिखते हैं कि ७५ वर्ष की आयु तक मुझे दवा की एक बूँद की भी जरूरत नहीं पड़ी। यदि हम खाने–पीने में गड़बड़ी करते हैं तो शरीर के साथ किए गए अत्याचार का दुष्परिणाम हमें अवश्य भुगतना पड़ेगा।

इस छोटे से लेख में संसार के सभी दीर्घजीवी मनुष्यों के अनुभवों को देना संभव नहीं है। जितने थोड़े से उदाहरण ऊपर दिए गए हैं, उनसे हम यही सार निकाल सकते हैं कि यदि हम मिताहार को अपना मूल मंत्र मानें, क्या खाएँ, कब खाएँ और कितना खाएँ इसे भली प्रकार समझ लें सिगरेट, शराब चाय और क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, चिंता मनोविकारों से दूर रहें, खूब हँसें और प्रसन्न रहें, घूमने, दंड बैठक और आसन आदि के व्यायाम नियमित रूप से करते रहें तो यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि हम और आप अपने गिरे हुए स्वास्थ्य का सुधार करके दीर्घ आयु की प्राप्ति कर सकते हैं।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर डा. हैरिस सोबले ने यह दावा किया है कि यदि मनुष्य अपने बिगड़े हुए वातावरण अर्थात रहन–सहन और आचरण पर नियंत्रण कर ले तो आयु

दुगनी–तिगुनी हो सकती है। उन्होंने कहा–शल्य और चिकित्सा के द्वारा थोड़ी आयु बढ़ सकती है, स्थिर शतायुष्य के लिए आस्तिकता, नियम–संयम और स्वच्छ आचरण का आराम लेना आवश्यक है।

डा. सोबले ने आगे बताया–मनुष्य को अपने शरीर का ज्ञान होना चाहिए। खाने–पीने पर ध्यान देना चाहिए। शारीरिक और मानसिक चुनौतियों का सामना करना चाहिए। यह भी याद रखना चाहिए कि बूढ़ा भी हो जाए तो यह बेकार नहीं हो जाता। उसे व्यस्त रखा जाए। काम न करने से शरीर को जंग लग जाती है और लोग शीघ्र ही संसार से चल देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को सदैव सीखने के भाव से कुछ काम करते रहना चाहिए। अंत में उन्होंने शुद्ध, पौष्टिक खाद्य पदार्थ और जलवायु की बात कही। डा. सोबले की बात को इस यांत्रिक युग में झुठलाया नहीं जा सकता है, पर अब तक शतायु पुरुषों के जो आंकड़े मिले हैं, उन्हें तर्क सम्मत नहीं कहा जा सकता है। उन व्यक्तियों की जीवन पद्धति और अनुभवों के निष्कर्ष भी डा. सोबले के ही कथन की पुष्टि करते हैं। हाइफा से प्राप्त एक रिपोर्ट में बताया गया है कि श्रीमती जोहरा अल्वो नामक संसार की सबसे बूढ़ी स्त्री का गत सप्ताह इजराइल के नगर टाइदेरियाज में स्वर्गवास हो गया। मरने के दिन उसकी आयु १४० वर्ष की थी, उनकी सबसे बड़ी पुत्री ९० वर्ष की है और सबसे छोटा पुत्र ६५ वर्ष का है। श्रीमती जोहरा बड़ी धर्मपरायण महिला थीं, उन्होंने मरने के दिन तक भगवान की पूजा वंदना की। उनका कहना है–अपने को भगवान के सहारे छोड़ दें तो भगवान की शक्ति का प्राणों से मेल होता है, उससे रोग–शोक दूर रहते हैं।

नवाशहर सब डिवीजन (जालंधर) के गाँव पंडरा की रामो गुज्जर नामक महिला का १२६ वर्ष की आयु में देहावसान हुआ। उनके कान अंत तक पूरा सुनते थे। आँखों की रोशनी भली चंगी थी। मुख में काफी दाँत भी थे। वह चाय तथा बिजली की चक्की का आटा उपयोग नहीं करती थीं। हानिकारक भक्ष्य कभी नहीं लेतीं थीं और अधिक प्राकृतिक जीवन बिताती थीं।

मौल (सांतोजेल) इटली १९४ वर्षीय वृद्ध मारिया बास्ता अभी

भी काफी स्वस्थ हैं। उनके अनुसार दीर्घायुष्य का कारण यह है कि उसने कभी भी दवा नहीं खाई और भारी आहार भी कभी नहीं लिया। हल्के और सुपाच्य भोजन के कारण उनका पेट कभी खराब नहीं हुआ।

रियाद (सऊदी अरब) के एक १५० वर्षीय सऊदी शेख ने ५० वर्षीय महिला से विवाह किया है। शेख का कहना है कि पर्याप्त परिश्रम करते रहने से स्नायु जाल सशक्त बना रहता है। शरीर की नस–नाड़ियों को अच्छी तरह काम करते रहने से दीर्घजीवन मिलता है।

जतोई (सोनीपत) के रहने वाले हमीम सोनूराम का निधन हाल ही में ११५ वर्ष की अवस्था में हुआ। उनके ८२ वर्षीय पुत्र का स्वास्थ्य युवकों जैसा है। भोजन में गाय का दूध और मक्खन को अधिक स्थान दिया है।

पीपरा कछार आजमगढ़ के १३५ वर्षीय सिंहासन सिंह मरते क्षण तक अपना सारा काम अपने हाथों से करते रहे। श्रम ही उनकी दीर्घायुष्य का कारण रहा। रूस के किसान श्री गसानोव १५० वर्ष की आयु में भी अपने फार्म में व्यस्तता से काम करते रहे हैं। वे जीवन में कुल दो बार बीमार पड़े। इन सब उदाहरणों से डा. सोबले के कथन की पुष्टि हो जाती है। मनुष्य यदि नियम–संमय व श्रम का जीवन बिताए तो सौ वर्ष की आयु कोई आश्चर्य नहीं है।

श्रमशीलता, स्वच्छता, नियमितता तथा संतुलित जीवन–क्रम गहरी नींद एवं तल्लीन क्रियाशीलता दोनों का ही आधार है। जिसने भी सौम्य–संतुलित सात्विक आहार–विहार का अभ्यास कर लिया वह श्रम एवं विश्राम दोनों का भरपूर आनंद प्राप्त करते हुए प्रकृति के अनुरूप जीवन जीता है तथा प्रकृति प्रदत्त स्वाभाविक दीर्घायुष्य को भोगता है। मनुष्य को प्रकृति ने दीर्घजीवी होने के लिए ही पैदा किया है और प्राकृतिक नियमों को अपनाए रहने पर उसे दीर्घजीवन प्राप्त होता ही है। आवश्यकता जीवन को सरल स्वाभाविक ढंग से जीने की है।

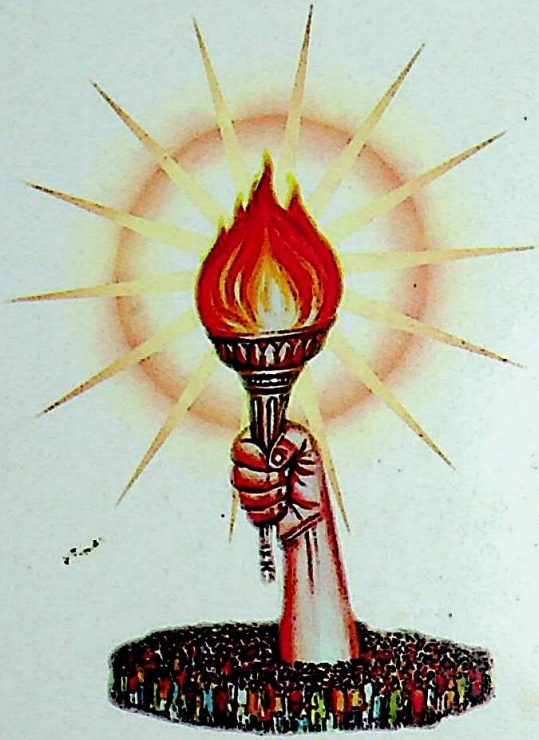

विचार क्रान्ति अभियान
शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार